स्वतंत्रता की बलिवेदी

(खंड-काव्य)

●

रचयिता

जगन्नाथप्रसाद मिलिंद

साहित्य-प्रकाशन-मन्दिर,
हाईकोर्ट रोड, लश्कर, ग्वालियर

प्रकाशक
साहित्य प्रकाशन मन्दिर,
हाईकोर्ट रोड,
लश्कर, ग्वालियर

प्रथम संस्करण : सितम्बर १९६२

मूल्य २ ००

मुद्रक :
साधना प्रेस,
लश्कर

भूमिका

बीसवीं सदी के पूर्वार्ध में भारत की जनता ने स्वतंत्रता-प्राप्ति की जो चेष्टाएँ कीं, उनका महत्त्व, भावनात्मक दृष्टि से भी, निर्विवाद है। उन चेष्टाओं के पीछे जिन महान् आदर्शों की प्रेरणा थी, उनका मूल भारतीय साहित्य और संस्कृति में निहित था। किंतु, उसे उस युग के महान् भारतीय नेताओं ने अभिनव दृष्टि-कोण से आत्मसात् करने और कार्य-रूप में परिणत करने का प्रयास किया। उन नेताओं में महात्मा गाँधी का विशिष्ट स्थान था। उन्होंने जनता को अपने बंधनों को तोड़ने की प्रेरणा दी। जनता ने उनका यथाशक्ति अनुसरण करने का प्रयास किया और उनके द्वारा प्रेरित आंदोलनों को अपने हृदय-रक्त से सींचा।

बीसवीं शताब्दी के द्वितीय दशक से प्रारंभ होनेवाली भारतीय जनता की उक्त अहिंसक क्रांति-चेष्टाओं का महत्त्व साहित्यिक दृष्टि से भी किसी प्रसिद्ध पौराणिक या प्राचीन ऐतिहासिक घटना से कम नहीं है। भारतीय इतिहास के लेखक उनके महत्त्व की ओर अब कुछ ध्यान देते दिखाई देते हैं। साहित्य के अन्य अंगों के लेखकों का भी कुछ ध्यान उनकी ओर गया है, किंतु, खंड-काव्यों के वर्तमान लेखकों का उचित ध्यान उनकी ओर अभी तक गया नहीं प्रतीत होता।

हिंदी में अनेक खंडकाव्य लिखे गए, किंतु, उनमें ऐसे खंडकाव्यों की सं भाग प्रायः नगण्य के समान ही है जिनमें भारतीय जनता के प्राप्ति ति

उक्त संघर्षों और उनकी पृष्ठ-भूमि को ललित-साहित्य-रचना का विषय बनाया गया हो।

यह अभाव मुझे बहुत दिनों से अखर रहा था और मैं ऐसे किसी खंडकाव्य की प्रतीक्षा कर रहा था, जिसमे मेरी अपेक्षा अधिक उम्र के किसी कवि के द्वारा उक्त विषय का समावेश किया गया हो। यह प्रतीक्षा इसलिए अस्वाभाविक नहीं थी कि मैं ऐसे अनेक प्रसिद्ध, वयोवृद्ध हिंदी-कवियों को जानता था, जिन्होंने, साहित्य मे रससृष्टि करने के साथ-साथ, देश की स्वतंत्रता के आंदोलनों में सक्रिय भाग लेकर कारावास तथा अन्य कष्ट-सहन भी किए थे। देश के स्वतंत्र हो जाने के बाद, उनके ऐसे किसी खंडकाव्य के प्रकाशन में भी कठिनाई का कोई कारण न रह गया था। फिर भी, जब मेरी उक्त प्रतीक्षा अब तक प्रायः असफल ही सिद्ध हुई और मैं भी ५५ वर्ष का हो गया, तब, मैंने इस सरस विषय पर स्वयं ही एक खंडकाव्य की रचना करने का निश्चय किया।

फलतः, 'स्वतंत्रता की बलिवेदी'—नामक यह पुस्तक कृपालु पाठकों तथा सहृदय समीक्षकों की सेवा में प्रस्तुत है।

इस खंडकाव्य की विषय-वस्तु मुझे अत्यन्त प्रिय है। वह अनेक वर्षों तक मेरे जीवन, मन, हृदय और आत्मा के निकट, सक्रिय रूप से, रह चुकी है।

सन् १९१९-२० के लगभग मैं उन छात्रों में सम्मिलित हो गया था, जिनके जीवन पर महात्मा गाँधी के प्रयोग हुए। उस समय शासकीय विद्यालय का बहिष्कार करके मैं राष्ट्रीय विद्यालय का छात्र बना और उसके बाद, भारत के स्वतंत्र होने तक, स्वतंत्रता-प्राप्ति के अहिंसक प्रयत्नों में मेरा विनम्र सहयोग यथाशक्ति बना रहा। मेरा साहित्य-रचना का कार्य भी उसीके साथ-साथ चलता रहा। अतः, दोनों विषयों में स्वाभाविक रस-साम्य उत्पन्न हो गया। सन् १९२० में लोकमान्य तिलक के देहांत ने मेरे हृदय को अत्यंत भावाभिभूत किया और सन् १९२२ में महात्मा गाँधी की गिरफ्तारी ने। मेरे साहित्यिक जीवन का प्रारंभ-काल भी यही था। सन् १९२० के आसपास मैंने कविताएँ लिखना आरंभ किया और सन् १९२२ में महात्मा गाँधी की

गिरफ्तारी पर लिखी गई मेरी एक कविता ने मेरे जीवन में सर्वप्रथम एक सामयिक पत्र में प्रकाशित होने का अवसर पाया। उसके बाद, देश के स्वतंत्र होने तक, मैंने जनता की स्वतन्त्रता-प्राप्ति की चेष्टाओं पर अनेक कविताएँ लिखीं, जो मेरे अब तक के प्रकाशित कविता-संग्रहों में उचित मात्रा में संकलित है। मेरी अनेक कविताएँ कारा-गृहों में लिखी गई थीं और एक ऐसी पुस्तक की भूमिका भी वहीं लिखी गई, जो सन् १९४२ में वहीं पूरी हुई थी। इस प्रकार, जीवन, चिंतन, कार्य तथा भावाभिभूति की दृष्टि से भारतीय स्वतंत्रता-आंदोलन से निकटतः संबद्ध रहने का जो अवसर मुझे मिला था, उसके कारण, उसपर खंडकाव्य लिखने का मेरा यह प्रयास, विषय-निर्वाचन की दृष्टि से, संभवतः, अनधिकार-चेष्टा न माना जायगा। काव्य-गत रस-सृष्टि की दृष्टि से भी मैं नम्रतापूर्वक यह कह सकता हूँ कि मुझे इसे लिखने में उतना ही आत्मानंद प्राप्त हुआ, जितना अपनी किसी भी प्रिय कविता को लिखने में हुआ था।

मुझे यह भी स्वीकार करना चाहिए कि उक्त जन-आंदोलनों तथा उनकी पृष्ठ-भूमियों का मेरे हृदय पर बहुत अधिक सांस्कृतिक ऋण-भार भी रहा है और इस खंडकाव्य को लिखकर मैंने उस ऋण के आंशिक परिशोधन का भी एक विनम्र प्रयास किया है।

मैंने अपने इस खंडकाव्य मे देश के स्वतंत्रता-आंदोलन के महान् नेताओ मे से कुछ का, अत्यंत कृतज्ञता और आदर के साथ, अनेक स्थानों पर, स्मरण अवश्य किया है, किंतु, उन्हें इसका प्रधान नायक बनाने का यत्न नहीं किया, क्योंकि, उनके सम्बन्ध मे साहित्य का अभाव नहीं है। महान् नेताओं के प्रति मेरी श्रद्धा अत्यंत गंभीर है। किंतु, साहित्य-रचना में मेरे प्रथम आराध्य तो, सदा से, पीड़ित, दलित, उपेक्षित तथा सामान्य जन ही रहते आए हैं। इस खंडकाव्य में भी मेरा दृष्टिकोण यही रहा है। कोई विवेकशील विचारक इससे इनकार नहीं कर सकता कि केवल राष्ट्रीय प्रसिद्धि के मूर्धन्य नेता ही इस देश को स्वतंत्र नहीं करा सकते थे, यदि स्थान-स्थान पर आंचलिक क्षेत्रों के सामान्य नेताओं और जनता ने स्वतन्त्रता-प्राप्ति के संघर्षों में उचित भाग न लिया होता। मेरे इस खंडकाव्य में मेरे प्रमुख लक्ष्य वही आंचलिक क्रांति-

कारी रहे हैं और उन्हींके प्रतीक के रूप में मैंने कुछ काल्पनिक स्त्री-पुरुषों को इसका प्रमुख पात्र बनाया है। उनके रूप में मैंने स्वतंत्रता के लिए संघर्ष-रत भारतीय जनता ही को अपने हृदय की भावात्मक श्रद्धांजलि अर्पित की है।

साधनहीन एवं सामान्य घरों में जन्म लेकर, अपने असाधारण साहस, क्रांति-भावना और क्रांतिकारिता के कारण, साधारण व्यक्ति भी किस प्रकार अपने जीवन का उच्चादर्श-युक्त निर्माण कर सकते है, यह एक अत्यंत रोचक विषय है। रस और भावना की दृष्टि से भी साहित्य के अध्येताओं को इसमें अपनी रुचि की सामग्री मिल सकती है। इस खंडकाव्य मे भी ऐसी कुछ सामग्री प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

साम्राज्यवाद, सामंतवाद आदि के युग की साहित्यिक परिपाटियाँ और विषय-निर्वाचन-परंपराएँ अति-अभ्यास के कारण इतनी चिकनी बन चुकी है कि उनपर आज भी अनेक शक्तिहीन साहित्यकार केवल फिसल-फिसलकर ही गतिवान् बनने का गौरव प्राप्त कर लेते है।

लोकतंत्र के युग के उपयुक्त नई एवं स्वस्थ साहित्यिक परिपाटियो, विषयनिर्वाचन-परंपराओं आदि का निर्माण अभी भारत में और विशेषत हिंदी में उचित मात्रा में नही हो पाया है। इसलिए, यह ज़मीन अभी कुछ खुरदरी-सी नज़र आती है और उसपर चलने में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। किंतु, अब समय आ गया है कि साहित्य के अध्येताओ को संकीर्णता की सीमा से मुक्त कराने का यत्न किया जाय !

साहसी और समझदार साहित्यसेवियों का यह कर्तव्य है कि वे अब मूल्यहीन हीरों के पुराने चिकनेपन का मोह छोड़कर मूल्यवान् हीरों के नए खुरदरेपन को चिकना बनाने का यत्न करें।

नव-नव काव्य-विषयों के निर्वाचन के संबंध में हिंदी-साहित्य इन दिनो किसी हद तक दैन्य का शिकार-सा प्रतीत होता है, यद्यपि काव्य-विस्तार की दृष्टि से उसका वैभव काफ़ी बढ़ रहा है। और इस बात से इनकार करना कठिन है कि अभिनवता सरसता का एक महत्त्वपूर्ण अंग हुआ करती है।

यद्यपि इस खंडकाव्य के सभी पात्र, स्थान आदि काल्पनिक है, तथापि इस प्रकार के व्यक्तियों, संस्थाओं और स्थानों के प्रत्यक्ष संपर्क में मै अपने राजनीतिक, शैक्षणिक और सामाजिक जीवन में आ चुका हूँ। अतः, कथा-वस्तु की दृष्टि से, इस खंडकाव्य को सत्याश्रित, ऐतिहासिक तथा जीवन-संपर्क-युक्त मानने में संकोच का कोई कारण प्रतीत नहीं होता।

साहित्य को जीवन से अलग मानने और अलग रखकर चलाने का यत्न करनेवाले कुछ लोग काव्य को केवल वैयक्तिक विषयों तक सीमित रखना चाहते हैं और सामाजिक विषयो को काव्य-क्षेत्र में प्रविष्ट होने के अनुपयुक्त मानते हैं। मैं उनसे सहमत नही हूँ।

मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि यदि धार्मिक, ऐतिहासिक और पौराणिक विषयों का समावेश काव्यों में निषिद्ध नहीं माना जाता, तो सामाजिक और ऐतिहासिक स्तर तक पहुँचे हुए राजनीतिक विषयों का प्रवेश क्यों माना जाना चाहिए, विशेषतः ऐसी स्थिति में, जब महात्मा गाँधी ने अपने युग की राजनीति को पवित्र बनाने का जीवन-भर इतना अधिक प्रयास किया था।

वास्तविक स्थिति तो यह है कि यह प्रत्येक सहृदय कवि की स्वाभाविक लाचारी है कि वह उन्हीं विषयों को अपना काव्य-विषय बना सकता है, जिनसे उसके जीवन का निकटतम और हार्दिक संबंध रहा हो।

आशा है, रूढ़िवादी साहित्य-समीक्षक इस खंडकाव्य की नई कथा-वस्तु के संबंध में मुझे भी अपनी इस लाचारी के लिए क्षमा कर देंगे।

जिस प्रकार के आदर्शों और व्यक्तियों के लिए मेरे हृदय में स्नेह, श्रद्धा और तादात्म्य का भाव है और जिनके विषय मे रसोद्रेक होता है, उन्हींको अपने इस खंडकाव्य का विषय बनाने का मैंने यत्न किया है। और कुछ मैं कर भी नहीं सकता था।

यद्यपि मैंने इस खंडकाव्य में, अपने साहित्यिक सामर्थ्य की सीमा के अंतर्गत, अपने हृदय का अधिक से अधिक रस ढालने का यत्न किया है, तथापि, मुझे आशा है कि बहुत-से पाठक अपनी प्रगतिशीलता और इसकी इस नवीनता के कारण भी इसे पसंद करेंगे

यद्यपि इस खंडकाव्य के छंद मात्रा-गणना के बंधन से मुक्त नहीं हैं, तथापि, उन्हें अंत्यानुप्रासों के पाश से पचास-प्रतिशत मुक्त कराने का यत्न किया गया है। विराम-चिन्हों के प्रयोग को भी पंक्ति के अंत का बंदी बनाकर नहीं रखा गया है। उन्हें आवश्यकता के अनुसार मध्य में भी लाया गया है। वाक्य-रचना की दृष्टि से भी, पद्य को, गद्य की भाँति ही, स्वाभाविक और स्वतंत्र रखने का यत्न किया गया है। एक वाक्य एक से अधिक पंक्तियों तक भी पहुँच सकने का अधिकारी माना गया है।

आशा है, जनता की भाँति ही, साहित्यिक अध्येताओं के लिए भी यह खंडकाव्य उपयोगी सिद्ध हो सकेगा।

ग्वालियर,
२८।८। '६२

जगन्नाथप्रसाद मिलिंद

वासंतीदेवी को,

जिनका जीवन बीत चला, पर,
पथ-शूलों का अंत न आया।

१

जिन ग्रामों की श्री से हारी थी नंदन-कानन की सुषमा,
जिन ग्रामों में वही युगों तक सुख-समृद्धि-रस की थी धारा,
उनका वह आनंद तिरोहित हुआ दासता के बंधन में,
बना ग्राम-वैभवमय भारत मूक-व्यथामय मानो कारा।

खोकर अंतर्ज्योति व्यथित थी पराधीन भारत की आत्मा,
छाई थी जब मातृभूमि के प्राणों पर माया की छाया,
उन्हीं दिनों, ले जन्म एक दिन माता रमा, पिता मोहन के
घर, शिशु चंदन भारत के लघु एक ग्राम हरिपुर में आया।

घर ? घर कहना उसे, हाय, क्या हृदयहीन उपहास न होगा ?
घर का क्या लक्षण था उसमें ? घर से क्या उसका था नाता ?
दो दुखिया मानव थे उसमें किसी तरह कुछ साँसें लेते,
बस इतने से क्या यह सार्थक था कि नरक वह घर कहलाता ?

यदि अपना हो, तो क्षण-भर को नरक-निलय भी स्वर्ग कहाए,
ममता का रस विरस नीड़ को सरस बनाकर बहलाए मन ;
किंतु, किराया देने पर भी जीवन-भर वह रहा पराया,
चाहे जिस क्षण हो सकता था उनका उस घर से निष्कासन।

अंगुल-भर भी भूमि न जिसकी, उसका अपना घर क्या होता ?
भूमि-श्रमिक मोहन का आश्रय रमा अकेली थी जीवन मे
केवल श्रम ही उसका धन था, केवल प्रेम हृदय का संबल ;
रहा खेत भी सदा पराया, स्वेद मिला जिसके कण-कण मे

ऐसे निस्संबल, अनिकेतन, निर्धन भूमि-श्रमिक के उर के
अंधकार में एक निमिष को बिजली कौंधी सुख-आशा की
जब चंदन का पहला रोदन गूँजा जीर्ण कुटी में सहसा;
खंडित हुई शृंखला मानो क्षण-भर रुद्ध हृदय-भाषा की

माता रमा हुई आह्लादित, क्षण-भर, वह दुर्लभ निधि पाकर,
शिशु चंदन के प्रथम स्पर्श में निकट मनुजता आई सारी
जिसे 'अछूत' समझकर सबने किया तिरस्कृत था इस क्षण तक,
निश्छल शिशु को गले लगाकर हुई गौरवान्वित वह नारी

पति-पत्नी वे समझदार थे ; स्वामीजी के सुने उन्होंने
प्रवचन ; शिशु निष्कलुष दृष्टि में उनकी ; पर, समाज के आगे
उसको भी अपमानित होकर ही जीना होगा भविष्य में,
इस विचार से हुए दूसरे ही क्षण चिंतित, खिन्न अभागे

धरती काली, अंबर काला, कुटिया का हर कोना काला ;
कण-कण पर शिशु के भविष्य की मानो छाई काली छाया
चिंता के काले सागर में डूबा उनका क्षण-भर का सुख ;
लगे सोचने—क्यों दुख सहने इस जग में यह शिशु भी आया !
जो श्यामल लावण्य रमा का था मातृत्व-विभा से मंडित,
उसपर काली छाया पल-भर को भविष्य-चिंता की छाई।
श्रम-गंभीर अधर मोहन के, स्मित-भूषित शिशु-जन्म-हर्ष से,
म्लान हुए, कल्पना कष्ट की जब शंकाकुल मन में आई

दोनों के अभिन्न हृदयों में था समान भावों का स्पंदन ;
पहले सुख, फिर दुख के भय ने प्राण किए उनके आंदोलित
अंतिम चरण गहन रजनी का गूँजा शिशु के प्रथम रुदन से ;
मोहन और रमा के शब्दों से भी हुई कुटी वह मुखरित

मोहन के शब्दों का आशय यह था—रमा, गुलामी में क्या
औरों के हित मरते-खपते यों ही बीतेगा यह जीवन
बालक यह जग में आया है, लाया है संदेश हर्ष का ;
पर, आगे के दुख की शंका से भय-कंपित होता है मन

पाया जिस प्राकृतिक न्याय के स्वत्व-सत्य से इसने तुमसे
स्नेह, दूध, सुख उसी भाँति क्यों यह न पाय अपने जीवन में
इस समाज से मानवता का न्यायोचित व्यवहार, परिश्रम,
निष्ठा का पूरा फल, जिससे जगे ज्योति इसके भी मन में !

इस आशय के शब्द रमा ने कहे—भले ही दुखी रहे हम,
पर, जब होगा बड़ा लाल यह, यह जग, यह समाज बदलेगा
यदि ये बदले नहीं, बदलने में इनके यह जीवन, यौवन,
तन, मन, प्राण, शक्ति, सबकी निज साहसपूर्वक आहुति देगा

नहीं चाहती मैं कि बने यह विद्या, धन, बल का अधिकारी
और सदा इसके जीवन में सुख की मृदु लहरें लहरावें
मेरी इच्छा है कि देश के दलितों, दुखियों के जीवन में
आयोजन इसके बलिदानों के साहस, नवजीवन लावें।

बोले मोहन इस आशय के शब्द कि—मैं भी तुमसे सहमत ;
यही चाहता हूँ कि बने यह वीर और ये बंधन तोड़े ;
पकड़े राह सत्य की, जूझे अन्यायों से, कभी न हारे ;
दमन, प्रलोभन के आगे नत होकर जीने से मुख मोड़े।

हम तो कुछ कर नहीं सके ; बस,जीवन-भर वह भार उठाया,
जो स्वार्थी लोगों ने हमपर लाद दिया अपना, मनमाना
सभी दृष्टि से सबके नीचे रहने का अभिशाप हमारे
ऊपर ऐसा चढ़ा कि हमने उसे अंग जीवन का जाना

बूढे हुए जवानी में हम, दब-पिसकर सब-कुछ खो बैठे ;
आशा से भी हाथ धो चुके, सुख के सपने सभी गँवाए
पशुओं से भी नीच समझकर सबने चूसा खून हमारा ,
आता कोई मिला न ऐसा, जो हमको कुछ धैर्य बँधाए

अब तो इच्छा सारी मन की कर एकत्रित यही चाहते—
नए विश्व में नया मनुज यह नई साँस ले सके मुक्ति की
तोड़े यह दासता-पाश, युग-युग की वज्र-रूढ़ियाँ सारी,
दुनिया नई बनाने निकले समता, न्याय, विवेक, युक्ति की

अब तक रक्त पिलाया तुमने सर्प-सदृश शोषक-समाज को ;
अब तुम दूध पिलाकर पालो बड़े यत्न से इस बालक को
सच्चे मन से करो कामना—यह पलकर संघर्ष कर सके ,
तोड़े दुष्ट चक्र यह, निर्बल कर दे इसके हर चालक को

कहे रमा ने इस आशय के शब्द कि—मन के ज्वाला-गिरि क
है यह वेग ; अभी तक तुमने पत्थर की की थी यह छाती
आज अचानक फूट पड़ा सब युग-युग का संचित दुख मन का ;
आज कथा कह डाली तुमने, अनायास जो कही न जाती

मेरा भी मन चाह रहा है—बोझ करे कुछ हलका अपना ।
इस बालक ने आकर मेरे प्राणों को झकझोर दिया है
जो अन्याय सहे हैं हमने, उन्हें नई पीढ़ी ललकारे,
इस इच्छा ने मेरे उर को आज ज्योति से पूर्ण किया है

आओ, चिंता-दुःख भुलावें ; मन में आशा-ज्योति जगावें ;
करें कल्पना उस भविष्य की, जिसमें कटें दासता-बंधन
स्वामीजी व्याख्यान दे गए—"हो विदेशियों का समाप्त अब
शोषण ; भारत हो स्वतंत्र,नवजीवन का हो सुखद जागरण !"

इस आशय के शब्दों में तब मोहन ने संवाद-समापन
किया कि—कल की चिंता तो है, पर, भविष्य की आशा ही प
जीवन आश्रित है मनुष्य का ; हम भी मानव हैं, हमको भी
आशापूर्ण भविष्य-स्वप्न पर आखिर होना होगा निर्भर

माता रमा और शिशु चंदन के नयनों में निद्रा छाई ;
मोहन का मस्तिष्क योजना लगा सोचने अगले दिन की
नव आशा लेकर आया है बालक, पर, कुटिया सूनी है ;
पुत्र-जन्म पर भूमि-श्रमिक को मिल सकती सहायता किनकी !

धन तो दूर, परिश्रम का भी देगा कोई नहीं सहारा ;
'अस्पृश्यों' के पास कौन इस अवसर पर आएगा सत्वर ?
पत्नी पड़ी प्रसव-शय्या पर, पति एकाकी परिचर्या को ;
वैभव और उच्च-कुल-गौरव से वंचित विपन्न नारी-नर

ऊँच-नीच की कई सीढ़ियाँ पिछड़े वर्गों में भी निर्मित,
नहीं एक से वर्ग दूसरा रखा चाहता मेल परस्पर ;
मोहन अपने लघु समूह में विवश खोजने को थे आश्रय;
उसमें भी धन के अभाव के कारण किसपर होते निर्भर !

निश्चय किया अंततः करने यत्न चलूँ ही कुछ लोगों तक,
इस अवसर पर उन्हें बुलाकर उनकी कुछ सहायता पाने ।
मानव सामाजिक होता है, पिछड़ा हो या हो उन्नत वह ;
मोहन भी चल पड़े सोचकर, पथ पर, कुछ नर-नारी लाने ।

पथ पर चलते-चलते शंका उनके मन में आई---कैसे
लाज रहेगी ? बचा-खुचा सब अन्न ले गई झुनिया दाई
नहीं बताशे, गुड़ या श्रीफल, जो बाँटे जावें उन सबको,
जिन्हें बुलाकर ले जाने की इच्छा मेरे मन में आई

फिर भी, किसी तरह नतमस्तक,कंपितपद बढ़ चले व्यथित वह ;
पहले किसके पास चलें, यह निश्चय कर न पा रहा था मन
सहसा, संमुख श्यामा-जीजी पड़ीं दिखाई ; लौट रही थीं
स्नान नदी में करके करने दीन-बन्धु ईश्वर का पूजन

श्यामा वीर, शिक्षिता नारी ; मिली उन्हें वैधव्य-वेदना ,
पिया उन्होंने कालकूट विष जीवन-भर अपने उस दुख का
पुनर्विवाह-पात्र जो समझा, उसमें साहस न था क्रांति का ,
अन्य विवाह-सूचनाओं पर घृणा हुई, विश्वास न सुख का

रही बालविधवा वह यों ही एकाकिनी प्रेम के जग में ,
आस-पास उनके दुखियों का, किंतु, एक परिवार बन गया
जो विपत्ति में पड़ा गाँव में, उसे सदा उनकी सुध आई ;
उनका मानवता-सेवा का एक नया संसार बन गया

मिला जन्म द्विज-कुल में उनको, पर, कोमलता उनके उर की
उन्हें दलित, शोपित वर्गों की सेवा के पथ पर ले आई
उनके लंबे जीवन का हर क्षण सेवार्पित हुआ, गाँव की
बहन बनी हर दुखिया नारी, हर पीड़ित नर उनका भाई

कहती थीं श्यामा-जीजी—हैं नगर, ग्राम, वन अगणित देखे ।
दूर-पास से देखे कितने तरह-तरह के हैं नर-नारी
भाँति-भाँति के अनुभव पाकर हृदय पक गया ; पाखंडों में
मिले न प्रभु, मैं ढूँढ़-ढूँढ़कर उनको धन-वैभव में हारी

सागर, नदी, सरों, झरनों में उन्हें ढूँढ़ना मैंने चाहा ;
मंदिर, तीर्थ, मठों में ढूँढ़ा ; ढूँढ़ा प्रभु को प्रासादों मे
कथा-भागवत, सत्संगों में, भाषण, प्रवचन, उपदेशों में,
ढूँढ़-ढूँढ़कर थकी उन्हें मैं कीर्तन, गीतों, संवादों मे

किंतु, कहीं भी उन्हें न पाया ; पाया उन्हें अंततः मैंने—
वहाँ, जहाँ मानव श्रम करते, दुख सहते, नीरव, जीवन-भर
जहाँ बिताते घोर कष्ट के क्षण; संघर्षों में जीते हैं
दीन, दलित, शोषित, पीड़ित जन जहाँ घृणा की चोटें खाकर

हो सकती थी सह्य रूढ़ियों के बंदी, निष्ठुर समाज को
पराधीनता के उस युग में कब विचार-धारा स्वतंत्र यह
श्यामा-जीजी के जीवन का हर क्षण बना कठोर यातना ;
पर, वह गईं निखरती प्रति-पल अत्याचार सभीके सह-सह

उन्हें देखकर ठिठके मोहन ; बोले, कर प्रणाम नतमस्तक,—
मुझे न आई याद तुम्हारी ; जीजी, भारी भूल हो गई
ढूँढ़ रहा था मलिन नालियाँ, छोड़ अमृत का झरना निर्मल ;
क्षमा करो तुम ; आज, न जाने, मेरी सुध-बुध कहाँ खो गई

दुखी-दरिद्रों, दबे-पिसे, हम छोटे लोगों का बल तुम हो ;
तुमने, सब-कुछ छोड़, हमारी रक्षा, उन्नति का व्रत लेकर
हमें उठाया, हमें बढ़ाया, सदा हमारी की सहायता ;
मिली निराशा में है आशा मुझे तुम्हारे दर्शन पाकर

जीजी, चलो, सँभालो चलकर, नया भतीजा बाट जोहता ;
कितने बच्चे गँवा चुके हम, शायद रक्षा कर लो इसकी
कुटिया में सामान नहीं है, कैसे इसकी खुशी मन सके ?
और बुलाने जाऊँ किसको ? तुम्हें छोड़, आशा हो किसकी

बोलीं श्यामा—मोहन-भैया, क्यों न दौड़कर तत्क्षण आए ?
कैसे भूल गए तुम—मुझको कितने प्रिय हैं ऐसे बालक
किसी दलित की कुटिया में जब शिशु-रोदन का सुस्वर सुनती हूँ,
लगता है—तप करने आए प्रभु के प्रिय, जग के प्रतिपालक

मेरे ऐसे भावों पर क्यों कहते हैं मुझको पागल सब ?
सबसे बढ़कर मानवता की क्या न दलित सेवा करते हैं
सबसे कम लेकर समाज से सर्वाधिक श्रम, स्वेद, रक्त से
मानवता का मंगल-घट क्या नहीं निरन्तर ये भरते हैं

सबसे अधिक चूस जनता को जो धन-कुल-सुख-राज्य जमाते,
उनका सब आदर करते हैं, उनका सब गुण-गौरव गाते
पर, निस्स्वार्थ, अथक सेवा की मूर्ति, दरिद्र, दलित मनुजों को
जीवन-भर सब घृणा-भाव से ठुकराते, अस्पृश्य बताते !

हृदयहीन यह ऐसी उलटी दुनिया ; इससे भावुकहृदया
मैं कैसे संघर्ष न करती, कैसे चिर-विद्रोह न करती ?
कैसे सहती यह सामाजिक विषम दशा, अन्याय, प्रपीड़न ?
निष्क्रिय रह क्या मेरी आत्मा नहीं सतत तिल-तिलकर मरती ?

करती हूँ कर्तव्य-मात्र का पालन, मैं न कृपा करती हूँ,
दलित, दुखी, निर्धन मनुजों की जब मैं कुछ सेवा करती हूँ ;
होते हैं कृतकृत्य प्राण, मन, हृदय ; शांति आत्मा पाती है,
जब सेवा-पथ पर बढ़ने में नहीं किसीसे मैं डरती हूँ।

तुमने अपने इतने शिशु जो खोए, उसका कारण यह था—
औषध, पोषक खाद्य नहीं तुम उनके लिए जुटाने पाए ;
सामाजिक अपमानों से क्षत-विक्षत हृदयों से वे पूरा
नहीं स्नेह भी अपने जीवन के प्रभात में पाने पाए।

' इसका एक मूल यह भी है''—स्वामीजी व्याख्यान दे गए—

''यह भारतमाता, स्वदेश यह है विदेशियों के शासन क
जंजीरों में बँधा हुआ, है घोर व्यथा इसके शोषण की ;
प्रति-पल है असह्य क्षति इसके गौरव,संस्कृति,तन-मन-धन की .

नया पुत्र जो तुमने पाया, उसकी रक्षा के प्रयास में,
पालन-पोषण, शिक्षा-दीक्षा, सद्‌गुण, साहस के विकास मे
मैं अपना तन-मन-धन,सब-कुछ,अर्पित कर दूँगी; निशि-वासर
उसके हित में लगी रहूँगी ; दूँगी उसको नव-प्रकाश मैं

इस दयार्द्र वाणी के पीछे श्यामा के उदार भाई के
धन की वह सहायता भी थी, जो उसने चुपचाप उन्हे दी
कर्कश पत्नी के कलहानल की चिंता से ऊपर उठ जो
जीवन-भर निस्स्वार्थ-भाव से उसने अपने-आप उन्हें दी

श्यामा के भाई माधव निज पत्नी दुर्गा से डरते थे,
किंतु, वर्ष में एक बार वह श्यामा के करते थे दर्शन
निश्चित दिन वह, श्रद्धा-गद्‌गद, श्यामा की कुटिया में आकर,
उन्हें वर्ष-भर के व्यय को धन-राशि उचित करते थे अर्पण

श्यामा धन अस्वीकृत करके कहती थीं—वह सेवा कलुषित,
जिसके पीछे, श्रम के बदले, पर-धन का आधार सुनिश्चित
निर्धन दलितों की सेवा के व्रत को जिनका जीवन अर्पित,
उनके जीवन का संबल हो धन उनके श्रम ही से अर्जित

एकाकी मेरा जीवन है, आवश्यकताएँ अतिसीमित ,
आठों पहर लगूँ जन-सेवा में यह भी प्रतिदिन कब संभव
बचे समय में थोड़ा श्रम कर, धन जीवनधारण के लायक
कर में प्राप्त, साधना करती रह सकती हूँ निस्स्पृह, नीरव

तुमसे मैं क्यों धन लूँ भैया ? बड़ी गृहस्थी तुम पर निर्भर ;
साधु-प्रकृति तुम, प्राप्त तुम्हें हैं सीमित धन-अर्जन के साधन
बहू तुम्हारी परंपरा की दास ; जान यदि वह यह जावे,
हो दिनरात कलह से घर की क्या न तुम्हारा दूभर जीवन

जो घर रूढ़ि-ग्रस्त, वैभव के, पाखंडों के अंध-पुजारी,
उनका धन उनके जीवन का कैसे बन सकता है सबल
जो दलितों, धनहीनों का पद उन्नत करने के प्रयास के
कठिन क्रांति-आयोजन में निज जीवन का देते हों प्रति-पल

यह सुन, माधव, निज सिर श्यामा के चरणों में रखकर, अपने
अश्रु कणों से उन्हें भिगाकर, कहते—जीजी, बनो न निर्दय
यदि तुम मेरा भाई होतीं, तो क्या यह अधिकार न होता
तुम्हें कि तुम लेतीं आधा धन मेरा निस्संकोच, छोड़ भय

मैं दुर्बल हूँ, क्रांति-पंथ पर खुलकर साथ न चल पाता हूँ,
करता प्रायश्चित्त पाप का हूँ यदि थोड़ा धन ही देकर
तो क्या मेरा इतना-सा भी अर्घ्य तुम्हें स्वीकार न होगा ?
क्या तुम ठुकरा दोगी इसको, हृदय बना लोगी क्या पत्थर

मेरा यह सहयोग अकिंचन जन-सेवा के निमिष तुम्हारे
जीवन-यापन-श्रम-चिंता से यदि कुछ मुक्त कर सके, मेरा
जीवन सफल बने यह, जीजी, घर-भर का पातक-प्रक्षालन
भी हो ; मानो विनय, करो यह स्वीकृत क्षुद्र राशि का अर्पण

यह सुनकर श्यामा के नयनों में भी अश्रु झलक उठते थे।
वह कहती थीं—माधव-भैया, क्षुद्र न यह धनराशि तुम्हारी
एक वर्ष इस गुप्त दान से जी सकती हूँ, दे सकती हूँ
दलित-दरिद्र-मनुजता-सेवा को निज समय, शक्ति मैं सारी

चलता था प्रत्येक वर्ष यह क्रम दोनों में ; इसमें अंतर
कभी न आता था ; करते थे माधव यों ही अनुनय आकर
करती थीं श्यामा अस्वीकृत पहले, फिर, आग्रह पर उनके,
साश्रु नयन, गद्‌गद, स्वीकृत वह उनकी भेंट समर्पित सादर।

यह सात्त्विक संबंध अमर था, अश्रु कणों से सिंचित, इसमें
कोई बंधन न था ; समय पर लड सकतीं श्यामा माधव से;
फिर भी, नियत समय पर माधव रख जाते प्रतिवर्ष राशि वह
उनके चरणों में श्रद्धा से ; लेतीं वह अविचल गौरव से।

इस नियमित संबल ने भी था आत्मतेज श्यामा का जाग्रत
रखा सदा कंटकमय पथ पर ; उनको स्वाभिमान, साहस की
ऐसी मूर्ति बनाया, जिसने किया प्रज्वलित त्यागी जीवन
उनका, पर, न शुष्क की क्षण-भर भी सहृदयता जीवन-रस की।

ऐसी श्यामा का ऐसा पा आश्वासन, चिंतातुर मोहन,
निर्भय होकर, इस आशय के शब्द, पुनः वदन कर, बोले—
जीजी, तुमने आज हमारे अंधकारमय इस जीवन में
नई ज्योति के नए द्वार हैं, सहसा, दयामूर्ति बन, खोले।

यदि तुम इस शिशु को दोगी निज आशीर्वाद, अभय की छाया,
तो यह मृत्युंजय होगा ; कर प्राप्त दीर्घ वय, कार्य करेगा
ऐसे, जिनसे दुखियों के दुख दूर हो सकेंगे, बदलेगा
यह युग, उच्च लक्ष्य के हित यह करते-करते यत्न मरेगा।

तुम निर्झर-सी निश्छल, जीजी, तुम सरिता-सी कलुषहारिणी,
तुम यदि लोगी इसे शरण में, यह न हमारे अन्य अभागे
शिशुओं-सा बेमौत मरेगा ; प्राप्त करेगा उच्च प्रेरणा
तुमसे ; संघर्षों के पथ पर सदा रहेगा सबसे आगे।

जीर्ण कुटी की ओर रमा की श्यामा के पग उठते पथ पर,
मन में उठते थे विचार, थे तन्मय मोहन साथ चल रहे
श्यामा बोलीं—मोहन, कोई नहीं किसीकी रक्षा करता !
विषम परिस्थिति कारण थी, यदि तुम दोनों ने कष्ट वे सहे

पशुओं, कीट-पतंगों-से हैं समझे जाते मानव उसके,
सहता है दासत्व देश जो औरों के शोषक शासन का
नहीं आंतरिक अन्यायों से लड़ते हैं जिसके नर-नारी,
वह विदेशियों को करता है आत्मसमर्पण निज जीवन का

अन्य देश को आत्मसमर्पण, दासभावना, कायरता से
हो जाता है देश पददलित, दीन-हीन उसके सब मानव
लज्जास्पद जीवन में उनके बस दुख ही दुख रह जाता है ;
सब-कुछ नष्ट-भ्रष्ट हो जाता, उनकी संस्कृति, गौरव, वैभव

जाति-पाँति के, छुआछूत के, ऊँच-नीच के कठिन रोग से
मुक्ति-लाभ करने के पहले भारत बना, गुलाम, तिरस्कृत
शोषित, पीड़ित, अन्य देश का आश्रित, स्वाभिमान से वंचित ;
जो कुछ सर्वोत्तम था इसकी जीवन-निधि में, वह सब अपहृत

दास, दरिद्र, दुखी भारत के तुम सर्वाधिक शोषित मानव ;
सामाजिक जीवन में सबसे निम्न तुम्हारा स्तर निर्धारित
सबसे निर्धन अर्थ-जगत् में ; तुम्हें कष्ट होना ही ध्रुव है ;
साहस, स्वाभिमान खो बैठे तुम हो-हो लांछित, अपमानित

किंतु, तुम्हारा और तुम्हारे शिशु का त्राता अन्य न होगा ;
तुम लोगों को स्वयं तोड़ने होंगे अपने सारे बंधन
जाग्रत करनी होगी अपनी मूर्छित आत्मचेतना, प्रतिभा ;
लगना होगा संघर्षों में, करना होगा क्रांतिसंगठन

दबे-पिसे मानव से बढ़कर नहीं क्रांति-ज्वाला-गिरि कोई ;
उससे बढ़कर जग-परिवर्तन का कोई साधन न मिलेगा
जब वह जाग्रत होकर उन्नति-मुक्ति-हेतु हुंकार करेगा,
तभी विश्व-मानवता का उर, बन प्रभात का सुमन, खिलेगा

मोहन, रमा और उनका शिशु जिस समाज के दलित अंग हैं,
उस समाज को वे अपने सर-आँखों पर अब लेने होंगे
तुम लोगों को भी स्वदेश की मुक्ति-हेतु अब लड़ना होगा ;
स्वतंत्रता की बलिवेदी पर तुम्हें प्राण तक देने होंगे

श्यामा की बातों से मोहन का सूखा मुख हुआ प्रफुल्लित,
नई ज्योति उनकी आँखों में चमकी, मस्तक हुआ समुन्नत
स्फुरण बाहुओं में, अनुभव कर वक्षःस्थल में नूतन स्पंदन,
लगे सोचने मोहन—लाया नया कर्मयुग शिशु नव-आगत

स्वप्नदर्शिनी, क्रांतिकारिणी, सेवा-तप-साधना-मूर्ति थी
श्यामा भी भविष्यचिंतन में अपनी भारतमाता के रत
जिसके दीन, दलित, शोषित शिशु उठकर, मिलकर, बलिदानों से
तोड़ेंगे दासत्व-शृंखला ; उसे मुक्त कर, होंगे उन्नत

बातों ही बातों में, चलते-चलते, कुटिया निकट आ गई ।
ज्योंही खोला द्वार उन्होंने, खुले रमा के उत्सुक लोचन
शिशु ने भी पलकें खोलीं । आ बालारुण की किरणावलि ने
भरा लालिमा से प्रभात की जीर्ण कुटी का सूना आँगन

कुटिया सूनी थी, सांसारिक स्वर्ण न उसमें कभी आ सका ;
किंतु, प्रकृति का स्वर्ण रश्मियों ने उदार होकर बरसाया
समदर्शी बालारुण अपना ले सारा निसर्ग-वैभव था
इस नव मानव-बाल-अभ्युदय का स्वागत करने को आया

श्यामा ने तत्क्षण आगे बढ़ हाथ रमा के सिर पर रखकर
मॉं की भाँति अकृत्रिम उसपर ढाल दिया वात्सल्य हृदय का
शिशु का माथा सूँघ कहा—यह करे विश्व को पावन, सुरभित,
पराजितों के भालों पर यह तिलक करे संमान, विजय का

आगे चलकर नामकरण जब करो, याद रखना, मेरा भी
है सुझाव यह एक—नाम हो इस प्यारे बालक का चंदन
बोले मोहन और रमा—जो तुमने नाम रखा यह इसका,
उससे अच्छा हमें मिलेगा और कहाँ ? स्वीकृत पदवंदन

करो पुण्यमय श्यामा-जीजी ! अबसे आशीर्वाद तुम्हारा
नाम-रूप में सदा करेगा यह कृतज्ञ शिशु सादर धारण
नामकरण यदि होगा भी, तो, नाम-मात्र को होगा ; फिर भी,
स्नेहपात्र यह बाल तुम्हारा कहलाएगा केवल 'चंदन'

श्यामा बोलीं—रमा, न तुम निज मन छोटा करना क्षण-भर भी
क्या शिशु-जन्म-हर्ष-उत्सव पर है केवल अधिकार उन्हींका
जो धन के स्वामी हैं ; ममता, स्नेह, सरसता, वत्सलता का
क्या केवल संसार उन्हींका, माँ-बेटे का प्यार उन्हींका !

नहीं ; निर्धनों के भी कोमल हृदय सरस, निर्मल होते हैं,
दलितों को भी हर्ष-प्रकाशन का वैसा अधिकार अबाधित
किंबहुना, हैं उनके साधन अधिक अकृत्रिम, भाव गहनतर ;
वे ईश्वर के प्रियतर, सेवा-व्रत-तप-रत हैं सतत, संयमित

यह शिशु-जन्म हर्ष-गंगा का अवगाहन-अवसर लाया है ;
मोहन-भैया, सबको इसमें आ मिलने को करो निमंत्रित
देखें, कौन यहाँ आता है उर की निर्मलता दिखलाने ;
कौन न आकर दिखलाता है हृदयहीनता अपनी अनुचित

छोटा-सा है गाँव, किंतु, यह भी विभेद का एक नमूना ;
धनी-दरिद्र, दलित-द्विज इसमें, हिंदू-मुसलमान-ईसाई
पर, तुम सबको एक समझकर बड़े प्रेम से यहाँ बुलाओ !
यत्न करो—एकत्र यहाँ हों सारी बहनें, सारे भाई

मेवा, मिश्री और नारियल, जो चाहो, सो बाँटो, जी भर,
मत सोचो तुम—द्रव्य कहाँसे आएगा उन सबकी खातिर
धनिकों का एकाधिकार मैं नहीं हर्ष पर रहने दूँगी ;
स्नेह-घटा मेरे उर में युग-परिवर्तनकारी आई घिर

मेरे जिम्मे रहा खर्च सब, श्रीफल आदि मँगाली हूँ मैं ;
सबके साथ, मुक्त भावों से, मिल, नाचूँगी, गाऊँगी मैं
धन से रहित, समृद्ध हृदय के, तुम भी तो कुछ प्रमुदित हो लो;
इस सूनी कुटिया में गंगा हास-हर्ष की लाऊँगी मैं

बोले मोहन—श्यामा-जीजी, तुमने साहस बहुत बढ़ाया ;
जाता हूँ मैं, हाथ जोड़कर, सबको यहाँ बुलाऊँगा मैं
पर, यह निश्चित है—अछूत के यहाँ न कोई भी आएगा ;
देखोगी तुम, खाली हाथों अभी लौटकर आऊँगा मैं

श्यामा बोलीं—तुमसे भी जो अधिक 'अछूत' बताए जाते
वे भी तो हैं कई गाँव में ; पहले तुम उनके घर जाओ
उनमें भी जो सबसे निर्धन, पहले उनको करो निमंत्रित ;
देने आशीर्वाद इसे उन सबको सादर लेकर आओ

देखोगे तुम, उन सबसे यह भूमि निकट की भर जाएगी ;
ग्रामगीत-स्वर, लोकनृत्य-लय से गूँजेगा इसका कण-कण।
वे पुण्यात्मा नर-नारी जब देंगे आशीर्वाद इसे, तब
क्रांति-भावना से समृद्ध इस शिशु का होगा पावन जीवन।

तुमसे 'उच्च' जातियों के जो कहलाते, वे भी आएँगे
कुछ तो ; वे भी कुछ आएँगे, जो हैं धनिक, सुखी नर-नारी।
मानवता कुछ बची गाँव के कुछ लोगों में तो होगी ही ;
हुई नहीं है हृदयहीन यह सृष्टि अभी ईश्वर की सारी !

मोहन ने जब किए गाँव के सब नारी-नर-शिशु आमंत्रित,
हुआ कुतूहल कुछको ; कुछने सोचा—कितने बच्चे खोकर
पाया है यह बालक इसने ! अतः, चाहता है यह सबका
आशीर्वाद, बाँटने को, पर, क्या होगा इस निर्धन के घर ?

मानवता, जिज्ञासा, विस्मय ले आए जो भीड़ खींचकर,
रमा और मोहन के लोचन उसे देखकर सजल हो गए।
वे गद्गद, सानंद, देखते रहे व्यवस्था सब श्यामा की,
इतने श्रीफल बँटे कि उनके सूने जीवन सफल हो गए !

बहीं ग्रामगीतों की गंगा, झरे लोकनृत्यों के निर्झर,
प्रकृत हास—आनंदोत्सव ने पुलकित किया भूमि का कण-कण।
लगीं सोचने सहसा श्यामा—स्वाभाविक ऐसे आयोजन !
अच्छा है, कुछ मुदित क्षणों में रह लेते हैं ये भोले मन !

पर, इनको यह ज्ञात नहीं है—इस जीवन में प्राण नहीं हैं ;
यह आनंद ऊपरी है, सब मर्म खो चुका गहराई का।
हैं बंदी दासत्व-शृंखला के भारत के सब नर-नारी ;
लुटी सरलता शैशव की, रस सूखा इनकी तरुणाई का।

मुक्त पवन से स्पर्श-पुलक पा नहीं सोचते हैं ये मन में—
हम भी ऐसे मुक्त हो सकें, इसका करें प्रयास संगठित ;
रवि-किरणों की विमल विभा से जाग्रत होकर नहीं सोचते—
पराधीनता-तम परास्त कर, करें देश हम निज आलोकित !

इनके साथ मुदित हूँ मै भी, शामिल हूँ इस आयोजन में ;
किंतु, शूल यह खटक रहा है बार-बार मेरे अंतर में—
खेल रहे हैं ये अबोध शिशु-से जिसके उजड़े आँगन में,
पराधीन वह भारतमाता, पीड़ित है, लांछित जग-भर में ।

सार्थक हो यह सब आयोजन, जो इस शिशु के जन्मदिवस पर
आज यहाँ हो रहा, कर सके यदि यह बालक ऐसा निश्चय—
"मुक्तिसमर में मैं जीवन-भर लगकर, प्रिय भारतमाता की
स्वतंत्रता की बलिवेदी पर प्राण चढ़ाकर, बोलूँगा जय !"

२

भोलाराम गुरूजी नाटे, काले, पगड़ीवाले थे ;
सदा हाथ में रखते डंडा, भेड़ों के रखवाले-से।
लगा त्रिपुंड, अँगरखा, धोती पहने वह ढीली-ढाली,
गज-गति से चलते थे पथ पर प्रभुता के मतवाले-से।

ज़मींदार के जीर्ण तबेले में उनकी चटशाला थी ;
पान चबाते, हुक्का पीते, बच्चे वहीं पढ़ाते थे।
विद्या कम, आतंक अधिक था ; भक्त गाँव के मुखिया थे ;
इसीलिए, भारी संख्या में लड़के पढ़ने आते थे।

जो लड़के दक्षिणा, दूध, घी, सीधा गहरा लाते थे,
फटे टाट को उलट-पलटकर, पास उन्हें बैठाते थे ;
जो लड़के निर्धन होते थे, वे चाहे मेधावी हों,
बात-बात पर उन्हें गुरूजी मुर्गा व्यर्थ बनाते थे।

पेट काट, जो, अधिक दक्षिणा दे, करते अनुनय भारी,
कुछ ऐसे दलितों के शिशु भी उनसे पढ़ने आते थे ;
किंतु, गुरूजी, एक किनारे, बैठाते थे दूर उन्हें ;
बात-बात पर डाँट-डपटकर दो अक्षर बतलाते थे।

सेठ हुलासीराम प्रशंसक उनके, थीं सेठानी भी,
उनके पुत्र बुलाकी पर वह लाड़ विशेष दिखाते
तीन बरस में नहीं बुलाकी आगे बढ़े ककहरे से,
फिर भी, उन्हें गुरुजी सबसे योग्य छात्र बतलाते

था कृतज्ञता-पाश सुदृढ़, गुरु-देव सेठ-सेठानी से
प्रायः प्रतिदिन दान-दक्षिणा और निमंत्रण पाते
वैद्यक, ज्योतिष के भी ज्ञाता वह अपनेको कहते थे,
करते थे इलाज दोनों का और भविष्य बताते

जमींदार गजसिंह, हुलासी सेठ गरीबों पर दावे
झूठे जब-जब करते, गुरुजी सदा बुलाए जाते
हरिश्चंद्र-अवतार समझकर उन दोनों यजमानों को
भोलाराम गवाही देने चले अदालत आते

जमींदार के पुत्र प्रतापी भी पढ़ने आते उनसे ;
नाम घमंडीसिंह, शौर्य वह अपना खूब दिखाते
काला अक्षर भैंस बराबर रहा उन्हें दो बरसों तक,
फिर भी, गुरुजी का प्रोत्साहन वह पाते ही जाते

भोलाराम पिता के आश्रित ; इससे, अभय घमंडी थे,
सिर गरीब बच्चों के प्रायः आपस में टकराते
कभी-कभी वह पुस्तक, पट्टी भूल बिछौने पर आते ;
गेंद, गुलेल, बाँसुरी, लट्टू बस्ते में रख लाते

दुस्साहस बढ़ गया ; घमंडी इतने हो उद्दंड गए
कि जब एक दिन गुरुजी तंद्रा में थे, तब उनकी
बाँध उन्होंने दी धागे से सोती बिल्ली की दुम में ;
झटका लगने पर गुरुजी की सबने सुनी खरी-खो

धन का सत्ता से गँठबंधन स्वाभाविक होता ही है,
हुआ बुलाकी और घमंडी में था गहरा अपनापन
दोनों ने मिलकर गुरुजी से कहा कि उनकी चोटी को
बिल्ली से बाँधा रघुवर ने (दलित छात्र था जो निर्धन)

दुर्वासा बन, डंडा ले, पिल पड़े गुरूजी रघुवर पर,
उसका, करके ख़ूब पिटाई, किया उसी क्षण निष्कासन
वह निर्दोष, खिन्न, अपमानित, आहत, आया अपने घर ;
अन्य छात्र यह स्तब्ध देखते रहे अकारण निर्यातन

यह कुलीनता-धन-सत्ता-मद-प्रभुता विद्या-मंदिर पर
प्रतिदिन बढ़ती जाती थी, यह निर्धन-दलितों का पीडन
होता जाता था असह्य, यह पक्षपात, अन्याय, दमन ;
मार्ग दूसरा नहीं दिखाई देता था; थे चिंतित मन

उनके, जो थे प्रगति चाहते शिक्षा की निज हरिपुर में।
पर, वे क्या करते ? थी केवल एक पाठशाला जिनकी
भोलाराम गुरूजी वह थे पोषित धन-सत्ता-बल से ;
उनका कर प्रतिरोध सकें, थी शक्ति ग्राम में यह किनकी

प्रतिभा की कलियाँ शिशुओं की कभी न खिलने पाती थीं,
नित्य तुषार-पात होता था उनपर अत्याचारों का
सिसक-सिसककर रह जाते थे कोमल अंतर् छात्रों के,
अंत न आता होनेवाले उनपर कठिन प्रहारों का

अद्भुत कीर्ति-कथा यह पहुँची कानों तक श्यामा के भी
भोलाराम गुरूजी के उस नरक-तुल्य विद्यालय की
निश्चय किया उन्होंने, सुन,—वह नव-शिक्षालय खोलेंगी।
सुनी बात माधव ने भी उस श्यामा के शुभ निश्चय की

धन का सत्ता से गँठबंधन स्वाभाविक होता ही है,
हुआ बुलाकी और घमंडी में था गहरा अपनापन
दोनों ने मिलकर गुरुजी से कहा कि उनकी चोटी को
बिल्ली से बाँधा रघुवर ने (दलित छात्र था जो निर्धन)

दुर्वासा बन, डंडा ले, पिल पड़े गुरूजी रघुवर पर,
उसका, करके खूब पिटाई, किया उसी क्षण निष्कासन
वह निर्दोष, खिन्न, अपमानित, आहत, आया अपने घर ;
अन्य छात्र यह स्तब्ध देखते रहे अकारण निर्यातन

यह कुलीनता-धन-सत्ता-मद-प्रभुता विद्या-मंदिर पर
प्रतिदिन बढ़ती जाती थी, यह निर्धन-दलितों का पीडन
होता जाता था असह्य, यह पक्षपात, अन्याय, दमन ;
मार्ग दूसरा नहीं दिखाई देता था; थे चिंतित मन

उनके, जो थे प्रगति चाहते शिक्षा की निज हरिपुर में।
पर, वे क्या करते ? थी केवल एक पाठशाला जिनकी
भोलाराम गुरूजी वह थे पोषित धन-सत्ता-बल से ;
उनका कर प्रतिरोध सकें, थी शक्ति ग्राम में यह किनकी

प्रतिभा की कलियाँ शिशुओं की कभी न खिलने पाती थीं,
नित्य तुषार-पात होता था उनपर अत्याचारों का
सिसक-सिसककर रह जाते थे कोमल अंतर छात्रों के,
अंत न आता होनेवाले उनपर कठिन प्रहारों का

अद्भुत कीर्ति-कथा यह पहुँची कानों तक श्यामा के भी
भोलाराम गुरूजी के उस नरक-तुल्य विद्यालय की
निश्चय किया उन्होंने, सुन,—वह नव-शिक्षालय खोलेंगी।
सुनी बात माधव ने भी उस श्यामा के शुभ निश्चय की

: २९ :

नया वर्ष आने के पहले ही, श्यामा की कुटिया में
एक दिवस वह पहुँचे, बोले, करके सविनय पदवंदन,—
जीजी, किया क्रांतिकारी यह निश्चय तुमने मंगलमय
कि तुम ग्राम हरिपुर में शिक्षा का लाओगी नव-जीवन

यह सुनकर मेरी आत्मा को अकथनीय संतोष हुआ।
इससे बढ़कर सुखद सूचना अन्य न छात्रों को होगी
कि तुम मुक्ति उनको उस भोला की गंदी चटशाला के
पक्षपात, अन्याय आदि के कठिन बंधनों से दोगी

मेरी इच्छा है कि तुम्हें मैं दूँ कुछ भूमि, अधिक कुछ धन,
जिन्हें लगाओ तुम अपने नव-विद्यालय-संचालन में,
जिससे इस हरिपुर के बालक शिक्षा प्राप्त कर सकें वह,
जिससे नई ज्योति जाग्रत हो उनके तम-मय जीवन मे।

बोलीं श्यामा—तुम्हें याद उन स्वामीजी की तो होगी,
जो कुछ दिन कर गए वास हरि-पुर में आकर एकाकी,
नाम न जिनका ज्ञात हो सका, किन्तु, विचारों से अपने
जो लोगों में आग भर गए स्वतंत्रता की इच्छा की।

स्वामीजी को कारा-वासी किया विदेशी शासन ने;
धीरे-धीरे आग बुझ गई वह निस्साधन जन-मन की।
कितने वर्ष व्यतीत हुए! हो सह्य शिथिलता यह कब तक?
मेरे उर में चुभती है यह पराधीनता जीवन की।

शारीरिक दासता मानसिक बनती जाती है क्रमशः;
शिक्षा पर अधिकार देश की किया विदेशी शासन ने;
नीचे से ऊपर तक सारे विद्यालय आश्रित उसके;
शिक्षक पंगु बनाए शिक्षा के उलटे संचालन ने।

जो कुछ विद्यालय स्वतंत्र, हैं उसी नीति के अनुयायी ;
अर्थ-पिशाच, पक्षपाती हैं शिक्षक उनके संचालक
भ्रष्ट प्रथा से उनकी बालक पीड़ित हैं, मुरझाए हैं ;
वे करते दासता-पाश दृढ़-तर बन शिक्षा-संहारक

जो विद्या थी मुक्ति-साधिका, वह दासत्व-प्रेरिका है ;
जो शिक्षक थे जनक-तुल्य, वे छात्रों के पीड़क, शोषक
जड़ में विष भर दिया देश की माया-मय शिक्षा-क्रम ने
पढ़-पढ़कर दासता-समर्थक शिक्षित बने स्वार्थ-साधक

स्वतंत्रता के दृष्टिकोण से नई नीति जब शिक्षा की
अपनाई जाएगी, तब कुछ मुक्ति-प्राप्ति-आशा होगी
केवल नीति नहीं, साधन भी नए प्राप्त करने होंगे ;
शिक्षक नए, सकल शिक्षा का माध्यम निज भाषा होगी

नई दृष्टि से नया बनाना चाह रही मैं विद्यालय,
मुक्त बंधनों से हो सारे जो धन-सत्ता-माया के
ईंट-पत्थरों का न, केंद्र हो विद्यालय मानवता का ;
निस्स्पृह शिक्षक हों जीवन-तरु स्वतंत्रता की छाया के

लक्ष्मी की आश्रिता न विद्या अब होगी, माधव-भैया,
तुमसे धन या भूमि न लूँगी विद्यालय के लिए कभी
उसे समय दो तुम कुछ अपना प्रतिदिन यदि उदार होकर,
अभिनव-ज्ञान-यज्ञ-आयोजन की हो इच्छा पूर्ण सभी

धनी-दरिद्र, दलित-द्विज, बालक और बालिकाएँ, सबके
लिए रहेगा मुक्त सदा वह, तोड़ विषमता के बंधन
उसपर नहीं प्रभाव डालने में समर्थ होगा कोई,
सेठ, पादरी, पंडित, मुल्ला, ज़मींदार अथवा शासन

जो कुछ विद्यालय स्वतंत्र, हैं उसी नीति के अनुयायी ;
अर्थ-पिशाच, पक्षपाती हैं शिक्षक उनके संचालक
भ्रष्ट प्रथा से उनकी बालक पीड़ित हैं, मुरझाए हैं ;
वे करते दासता-पाश दृढ़-तर बन शिक्षा-संहारक

जो विद्या थी मुक्ति-साधिका, वह दासत्व-प्रेरिका है ;
जो शिक्षक थे जनक-तुल्य, वे छात्रों के पीड़क, शोषक
जड़ में विष भर दिया देश की माया-मय शिक्षा-क्रम ने
पढ़-पढ़कर दासता-समर्थक शिक्षित बने स्वार्थ-साधक

स्वतंत्रता के दृष्टिकोण से नई नीति जब शिक्षा की
अपनाई जाएगी, तब कुछ मुक्ति-प्राप्ति-आशा होगी
केवल नीति नहीं, साधन भी नए प्राप्त करने होंगे ;
शिक्षक नए, सकल शिक्षा का माध्यम निज भाषा होगी

नई दृष्टि से नया बनाना चाह रही मैं विद्यालय,
मुक्त बंधनों से हो सारे जो धन-सत्ता-माया के
ईंट-पत्थरों का न, केंद्र हो विद्यालय मानवता का ;
निस्पृह शिक्षक हों जीवन-तरु स्वतंत्रता की छाया के

लक्ष्मी की आश्रिता न विद्या अब होगी, माधव-भैया,
तुमसे धन या भूमि न लूँगी विद्यालय के लिए कभी
उसे समय दो तुम कुछ अपना प्रतिदिन यदि उदार होकर,
अभिनव-ज्ञान-यज्ञ-आयोजन की हो इच्छा पूर्ण सभी

धनी-दरिद्र, दलित-द्विज, बालक और बालिकाएँ, सबके
लिए रहेगा मुक्त सदा वह, तोड़ विषमता के बंधन
उसपर नहीं प्रभाव डालने में समर्थ होगा कोई,
सेठ, पादरी, पंडित, मुल्ला, जमींदार अथवा शासन

भारत—माता को स्वतंत्रता प्राप्त कराने के रण में
        लगनेवाले नर-नारी यदि कुछ वह कर उत्पन्न सके
तो, सार्थक हो वह विद्यालय, सार्थक हो सब श्रम मेरा ;
        हर शिक्षक ऐसा हो उसका, इस प्रयास में नहीं थके

तुम आरंभ करो अपनेसे, अब दुर्गा का भय छोड़ो ;
        हम दोनों निःशुल्क रूप में शिक्षक बनकर कार्य करे
निर्वेतन, अनिकेतन आश्रम-सा अभिनव विद्यालय वह
        वृक्षों की छाया में खोलें, धन-सत्ता से नहीं डरे

छोटे-छोटे बच्चे-बच्ची सुरभित सुमन मनुजता के
        उस अबाध उद्यान-तुल्य नव विद्यालय में विकसित हो
माधव-श्यामा-जैसे वे भी भाई-बहन-समान वहाँ
        मिल-जुलकर स्वतंत्रता-साधक शिक्षा से लाभान्वित हो

यदि दो प्राणी भी ऐसे हम बना सके विद्यालय से,
        छिन्न-भिन्न करने निकलें जो भारत-माता के बंधन
जीवन-भर संघर्ष कर सकें जो उस मंगलमय रण में,
        स्वतंत्रता की बलिवेदी पर जो कर सकें प्राण अर्पण

तो, हम अपना समझेंगे श्रम सकल सफल, अपना जीवन
        समझेंगे कृतार्थ, जीवन की संध्या में लेंगे सुख की
साँस, लिया करते हैं जो वे मानव, जिनका होता है
        स्वप्न पूर्ण, संघर्ष सफल, है मिट जाती चिंता दुख की

बोलो, भैया, दोगे मुझको सात्त्विक दान समय का तुम ?
        क्या इस आयोजन में मेरा खुलकर हाथ बँटाओगे ?
मेरे साथ, क्रांति के साधन उद्बोधित करने को तुम,
        क्या नव-विद्यालय-संचालन-पथ पर आगे आओगे ?

अध्यापन निःशु[illegible] बोले—जीजी, मेरी दुर्बलता
धन का [illegible] ती यदि तुम मिटा सको, तो आज्ञा दो
मुक्त पवन, नभ [illegible] ति में अपने भी जीवन-क्षरा ;
ममता-म[illegible] मुझको समझ, शरण में अपनी लो !

तब उनमें वह [illegible] में हो सहायता इससे, तो
ज्योति [illegible] , छात्राओं, छात्रों के शिक्षा-बंधन
जीवन-भर संघ[illegible] हो यह सारा आयोजन !
स्वतंत्रता [illegible] कितना दुखी हो चला शिशु-जीवन !

शंका छोड़ो, मा[illegible] त, सुन्दर सुमन मनुजता की
कि तुम [illegible] जड़ शिक्षा के कठोर उत्पीड़न से
मेरे कारण दलि[illegible] हृदय विकल हो उठता है ;
अंत करें[illegible] ये शीघ्र क्रूर इस बंधन से ।

माधव बोले—ज[illegible] पर, वह है माता भी तो;
कल प्रभ[illegible] त-भाव से चटशाला से आते घर,
समय अधिक से [illegible] , कह उठती है वह मुझसे—
शक्ति अट[illegible] रे को ? दया नहीं आती इनपर ?

माधव चले गए, [illegible] नव-विद्यालय देगा शिक्षा,
नव विद्य[illegible] भूति का उन्हें मिलेगा अपनापन,
घर-घर जाकर [illegible] वह भी उस आयोजन में
शिक्षा [illegible] मुझको भी सेवा का प्रोत्साहन ।

एक साथ दो अ[illegible] की नूतन विद्यालय के
श्यामा [illegible] घर, तब क्रमशः होगी जाग्रत
था आदर्श एक [illegible] अंध-रूढ़ियाँ दुर्गा भी ।
दोनों के [illegible] पथ की होगी एक दिवस अनुगत ।

श्यामा बोलीं—सफल तुम्हारी यह आशा हो, दुर्गा भी
बने सहायक शिक्षा के इस क्रांति-पूर्ण आयोजन में,
तुम दोनों का स्नेहपूर्ण सह-योग शक्ति अक्षय लावे
विद्या की नव सुमन-वाटिका के सौरभमय जीवन में।

माधव के मुख पर शंका की श्यामा ने देखी रेखा।
पूछा—क्यों चिंतित हो, भैया, कहो बात अपने मन की।
माधव ने तब कहा कि केवल एक बात शंका की है—
उस संस्था के लिए पूर्ति किस साधन से होगी धन की ?

अनुमति दो तुम मुझे कि मैं, कुछ भूमि और धन अर्पित कर,
समाधान इस कठिन समस्या का कर दूँ इस सीमा तक
कि हो सफलता इसमें, चिंता-रहित साधना से अपनी
शिक्षा के माध्यम से तुम बन सको मुक्ति-पथ की प्रेरक।

श्यामा के नयनों में इसपर चमकी भावों की विद्युत्।
कहा उन्होंने—धन को सब-कुछ समझ कार्य करनेवाले
अब न प्रेरणा देते जग को, प्राण-ज्योति आदर्शों की
अब आवश्यक समझी जाती, हटते हैं बादल काले

अब तो उससे संस्थाओं के संकट-मय जीवन-पथ के।
यही बहुत है जीवन-यापन को तुम मुझको दोगे धन
और कार्य में अपना भी तुम नियमित समय लगाओगे।
इतने ही संबल से होगा पूर्ण हमारा आयोजन।

शिशुओं की आत्मा के बंधन वृक्षों की छाया में हम
खोलेंगे, बंदी न रखेंगे उनको ईंट-पत्थरों के
भवनों के; फिर भला, भूमि का क्या होगा ? आदर्शों की
ज्योति जगाएँगे जीवन के जड़ता-पूर्ण अक्षरों में ;

शुल्क करेंगे हम दोनों; फिर क्या होगा
ा ? धरती के लालों को धरती का परिचय देंगे
ाभ, वृक्ष सभीका सीधा उन्हें दिलाएँगे
-मय संपर्क ; प्रकृति का वे सात्त्विक सुख, रस लेंगे

अथक साधना की दृढ़ता, निर्मलता की
जगेगी, जिससे माँ के काट सकेंगे वे बंधन,
ग्राम करेंगे और करेंगे अंतिम दिन
ा की बलिवेदी पर प्राणों का भी वे अर्पण !

ाधव-भैया, दृढ़ निश्चय घोषित कर दो
लगोगे कल से मेरे साथ नए आयोजन में !
ात, तुम्हारे कारण द्विज शिशु आएँगे ;
गे भेद-भाव का सब शिक्षा के प्रांगण में।

ीजी, घर की अर्थ-व्यवस्था करके मैं
ात से साथ तुम्हारे कार्य करूँगा यह नियमित,
अधिक मिलेगा तुमको मुझसे, पर, मेरी
ल्प है; तुम्हीं करोगी मेरा पथ-क्रम निर्धारित।

कर वंदन; श्यामा लगीं व्यवस्था में।
ालय खुला दूसरे दिवस प्रकृति के प्रांगण में।
देया निमंत्रण सबको श्यामा-माधव ने —
ाशु निःशुल्क पायँगे सब इस नव आयोजन में !

कुर क्रमशः विकसित होने लगे वहाँ ;
नज दायित्व दोहरा करने लगीं पूर्ण, अविचल।
विद्यालय इधर, उधर शिशु चंदन था,
विकास में उनके जीवन का अर्पित प्रति-पल।

श्यामा, मोहन, रमा, सभीके नयनों का तारा चंदन,
आशा-लतिका-सा, विकसित हो चला कुटी के आँगन में
चिर-वंचित उस शून्य कुटी में उमड़ी भावों की धारा,
एक नया उत्साह आ गया उसके मूर्छित जीवन में

नई दृष्टि, जो स्वामीजी से श्यामा-जीजी ने पाई
और प्राप्त की उनसे मोहन और रमा के जीवन ने
उससे वह शिशु प्राप्त कर सका उस कुटिया में स्थान नया ;
क्रांतिकारिणी नई प्रतिष्ठा पाई उसके तन-मन ने

वह दासत्व-काल भारत का अपमानों का, शोषण का ;
मानव की थी मिटी प्रतिष्ठा उस युग के उत्पीड़न से ।
मानव-शिशु का पद, जो जग के आदर का अधिकारी था,
मर्माहत था पड़ा उपेक्षा-आघातों के दंशन से ।

श्यामा, रमा और मोहन ने शिशु-पद का संमान किया ;
मानव के उज्ज्वल भविष्य की उसमें देखी नव-आशा ।
उसी दृष्टि से वे उस शिशु के प्रति करने व्यवहार लगे ;
चंदन को मिल उठी कुटी में नई भावना, नव-भाषा ।

फिर तो, उस मेधावी शिशु ने वे सारे बंधन तोड़े,
जिनसे बालक के विकास का मार्ग रुद्ध रहता आया
मिला उसे स्वाभाविक जीवन, जो न प्राप्त उनको, जिनका
शैशव असंमान, आडंबर के प्रहार सहता आया ।

कुछ शिशु वे, वैभव-आडंबर में जो पलते पग-पग पर,
मृदु उनका तन, दुर्बलतर मन, भ्रष्ट भविष्य, विकृत यौवन,
कुछ वे, जो अभाव से प्रेरित असंमान-आघातों से
पीड़ित हो-होकर खो देते जीवन की आशा का धन ।

राजकु ...भाविक बेटा, दोनों से विभिन्न, चंदन,
...ानि, स्नेह, वत्सलता स्वाभाविक, विकसित पल-पल
उसके ...र की जड़ पर करती थीं प्रहार श्यामा ;
...प्रहार अभावों के सह, देती थीं वात्सल्य विमल

सोंधी ...; हास की पहले थीं रेखाएँ अधरों पर,
...ीं किलकारियाँ बनीं कल-कूजन उस कुटिया का फिर
जो थे ...न में चलने लगा चपल घुटनों के बल ;
...लीलाओं से समृद्ध हो गया रमा का शून्य अजिर

श्यामा ...रोदन-ध्वनि से आकर्षित कर वह सबको,
...सिद्ध अधिकार दूध का घोषित करता था सत्व
भावी ...और वत्सलता का निज स्वत्व माँगता था ;
...ये सब पूर्ति माँग की सादर उस शिशु की सत्वर

श्यामा ...धिकार-प्राप्ति का आंदोलन करना उसने
...अपने बाल-रुदन से प्रथम बार उस आँगन में
सभी ...हित आग्रह की शक्ति उपार्जित की उसने
...प में निज स्वाभाविक तेजस्वी शिशु-जीवन में

आदा ...में त्रुटि यदि करतीं, मोहन से कहता ;
...की त्रुटि पर सर्वोपरि श्यामा का न्यायालय था
कि य ...के सिर पर स्नेह-छत्र थे तीनों के ;
...स के सहृदय श्रमिकों का दुलार भी अक्षय था।

कभी ...ासों से वह उपालंभ दे लेता था ;
...बात रमा-मोहन की वह श्यामा से था कहता
वह क ...श्यामा के भय से, भूल न करते थे ;
...र शिशु चंदन अपना स्वत्व प्राप्त करता रहता।

श्यामा भी यदि कभी न करतीं निज कर्तव्य पूर्ण कोई,
आस-पास के श्रमिकों से वह इंगित से कह देता था
फिर तो उपालंभ मिलता था श्यामा को पंचायत का।
चंदन अपना प्राप्य सभीसे स्वाभिमान से लेता था

चंदन निज कर्तव्य-ज्ञान भी स्वाभाविक रखना सीखा ;
हर स्नेही का स्वागत करता वह प्रेमल किलकारी से
उसके स्मित से भर जाती थी हर वत्सल उर की झोली ;
पाते थे उसका चुंबन सब भावुक बारी-बारी से

श्याम-सलोना रंग मिला था उसे, जरा उज्ज्वल बनकर ;
उसके मुख की रेखाओं में था मनमोहक आकर्षण
सुन्दर, स्वस्थ, प्रसन्न, तेज-मय भावी तरुण छिपा जिसमें,
ऐसा वह शिशु पथ शैशव का पूर्ण कर रहा था क्षण-क्षण

दैन्य नहीं उसके रोदन में, वह उसका सात्त्विक बल था ;
नहीं चाटुकारी किलकारी में, वरदान सहज वह था
स्मित में था उपकार नहीं, वह प्राप्य स्नेहियों का निर्मल ;
निर्धन-दलित-कुटीर-पंक में बालक सुभग जलज वह था

राजकुमारों के शैशव की वैभव-लीलाओंवाले
काव्य जिन्होंने पढ़े नहीं, वे माता-पिता रमा-मोहन
रस जीवन के बाल-काव्य का लेते थे प्रत्यक्ष मधुर,
उनकी कुटिया में बिखेरता जब लीला-सौरभ चंदन

सहज लोक-प्रियता आगामी उसकी अनुमानित होती,
जब दुलारते उसे श्रमिक नर-नारी, आ-आकर, क्रम से
जब श्यामा विद्यालय जातीं, खेत, परिश्रम को, मोहन,
रमा काम में लगतीं घर के, नियमित निष्ठा से, श्रम से

राजकुमार प्रकृति का पाता वह अंकों के सिंहासन
भिन्न-भिन्न मनुजों के, जिनमें होता स्नेह सहज उर का
उसके स्वाभाविक दुलार की सतरंगी रस-सज्जा में
एक-तान, नीरस वैभव था नहीं राज-अंतःपुर का

सोंधी गंध धरा की उसके विमल दुधमुँहे अधरों में,
थी गंभीर नीलिमा अंबर की उसके उन नयनो में
जो थे मीन-चपल भी, जिनमें घन-सा स्नेह उमड़ता था ;
अस्फुट-मधुर ममत्व दिखाता झलक तोतले वचनो में

श्यामा जब होतीं विद्यालय में, छवि चंदन के मुख की
उनके नयनों में फिर जाती बीच-बीच में; उनका मन
भावी अगणित आशाओं के साथ, ममत्व-भावना से,
प्रायः कर उठता अपने प्रिय चंदन का भविष्य-चिंतन

श्यामा कभी सोचतीं---चंदन कुछ ही वर्षों में उनके
विद्यालय का छात्र बनेगा, प्रतिभा-ज्योति दिखाएगा
सभी छात्र-छात्राओं से वह सब विषयों में आगे बढ़,
धीरे-धीरे, दूर-दूर तक अपना यश फैलाएगा

आशा करतीं कभी—नाम इस विद्यालय का यह चंदन
अमर कराएगा कि दिया यह इसने इसको साहस, बल
कि यह मुक्ति के लिए देश की गठित कर सके क्रांति-व्रती
तरुणों के संघर्ष-त्याग-बलि-दान-पंथ के पंथी दल

कभी याद आतीं उनको वे दो बाँहें छोटी-छोटी,
उनके साथ ठुमक चलने की जिन्हें उठा चेष्टा करता
वह कहतीं—तू अभी बहुत है छोटा, कुछ दिन बाद तुझे
विद्यालय ले चला करूँगी ; किंतु, न मन उसका भरता

मोहन जब चंदन का चुंबन लेकर जाते श्रम करने,
रूप घूमता उनके नयनों में चंदन का आ–आकर ;
स्वेद-बिंदु उनके जब गिरते रवि-किरणोज्ज्वल धरती पर,
होते विह्वल उनकी द्युति में स्नेह-ज्योति शिशु की पाकर ;

समुद सोचते—चंदन के शुभ यत्न किसी दिन भारत को
मुक्त कराएँगे; हमको भी धरती प्राप्त कराएँगे
इतनी-सी, जिससे हम सुख से, स्वाभिमान से, निज भू पर
निज श्रम सार्थक समझ, सगौरव, सपरिवार जी पाएँगे !

रमा गृहस्थी का श्रम करतीं; बीच-बीच में चंदन को,
जो खेला करता प्रसन्न-मन, देख-देखकर सुख पाती
और सोचतीं—समय देश का और हमारा परिवर्तित
होगा चंदन के श्रम से। तब वह आशान्वित हो जाती।

धीरे-धीरे चंदन पैरों चलने लगा ; एक दिन वह
श्यामा के विद्यालय में हो गया प्रविष्ट छात्र बनकर ;
श्यामा, माधव, अन्य शिक्षकों को आनंद हुआ इसपर,
वातावरण हुआ इससे उस विद्यालय का सुन्दरतर।

उधर, दूसरे दिन, माधव के घर पुत्री का जन्म हुआ ;
दुर्गा, माधव, दोनों, उसको पा इसलिए प्रसन्न हुए
कि थे पुत्र तो दो उनके, पर, पुत्री नहीं एक भी थी ;
यों वात्सल्यानुभव-प्राप्ति के नवाधार उत्पन्न हुए।

श्यामा बोलीं—भैया, कुछ-कुछ पुत्र तुम्हारे व्यर्थ हुए
मेरे लिए ; पढ़े वे पहले भोला की चटशाला में,
पुत्री को मैं, किंतु, शुरू से अपने विद्यालय में ला,
गूँथूँगी वीरा बालाओं की उज्ज्वल मणिमाला में।

कुछ ही वर्षों बाद, कुमारी मृदुला, माधव की पुत्री,
श्यामा के विद्यालय की बन गई एक छात्रा अभिनव
निस्संदेह बढ़ा, चंदन की भाँति, आगमन से उनके
भी उस विद्यालय का प्रतिभा–वैभव, मेधा-गुण-गौरव

चदन, मृदुला होनहार उस विद्यालय के सिद्ध हुए
छात्र और छात्रा ऐसे, जो प्राप्त सके प्रोत्साहन क
न्यायपूर्ण प्रत्येक शिक्षिका, शिक्षक का विद्यालय के ;
जिनके कारण विद्यालय का यश-सौरभ फैला घर–घर

एक प्रगति का पग वे भी थे स्वप्न-पूर्ति की श्यामा की
उचित दिशा में, जिसमें करतीं वह अविरत निशिदिन चित
ऐसी शिक्षा-संस्कृति-संगम-संस्थाओं का, जिनमें हो
दलित और द्विज का अभेद, हो दोनों में निष्कलुष मिलन

श्यामा, माधव का विद्यालय क्रमशः प्रगति लगा करने ;
छात्रों, छात्राओं की संख्या उसकी बढ़ती जाती थी
स्नेह, ममत्व, मुक्ति, आदर का वातारण देख, पढ़ने
वृक्षों की छाया मे शिशुओं की बहुसंख्या आती थी

शिक्षा थी निःशुल्क, प्रकृति थी ज्ञानार्जन-उपकरण वहाँ,
भेद नहीं था जाति-पाँति का, था व्यवहार सभीसे सम
देशभक्ति की संस्कृति थी उस विद्यालय की ज्योति नई,
स्वतंत्रता-संघर्षों के हित तैयारी का शिक्षा-क्रम

थी प्रत्येक छात्र-छात्रा से आशा की जाती उसमें
उस साहस की, जिससे भारत के स्वत्वों के वह रण
निज जीवन की आहुति देकर करे अग्रसर जनता को
स्वतंत्रता की बलि-वेदी पर निज सहर्ष प्राणार्पण मे

शैशव ही से बीज क्रांति का उसमें बोया जाता था,
भारत-माता के प्रति आदर-भाव सिखाया जाता था
स्वामीजी से मिली क्रांति की जो चिनगारी श्यामा को,
उसका पुण्य-प्रसाद वहाँका हर शिशु प्रतिदिन पाता था

विदेशियों के शासन ने जो शोषण किया देश का था,
भारत की जनता को निर्धन, निर्बल जो कर डाला था
धीरे-धीरे उसका परिचय भी उनको श्यामा देतीं,
उसका दंशन भी उनका उर विकल बनानेवाला था

लक्ष्मीबाई, तात्या टोपे, कुँवरसिंह इत्यादि लड़े
जो विदेशियों के शासन से, उनकी वीर-कथाएँ वह
रोचक, सरल, सजीव ढंग से प्रायः उन्हें सुनाती थीं—
कैसे किए उन्होंने साहस, कैसे सहे कष्ट दुःसह

उनको सुन-सुन चंदन, मृदुला आदि छात्र-छात्राएँ सब
विस्मित, आह्लादित, रोमांचित, उत्साहित हो जाती थी
हो उठती साकार क्रांति की चेष्टाएँ थीं उन सबकी,
तन्मय होकर श्यामा उनकी जब-जब कथा सुनाती थी

शिशुओं के नन्हे प्राणों में उठती प्रबल हिलोरें थी ;
वे मन ही मन निश्चय करते—हम भी भारत-माता को
बंधन-मुक्त कराने में निज जीवन अर्पित करने का
आश्वासन देंगे नेता, नव-भारत-भाग्य-विधाता को

एक ओर वह विद्यालय था खान बन रहा भारत के
मुक्ति-समर में लगनेवाले भावी युवक-युवतियों की
और दूसरी ओर ज्ञान की सरिता भी उसकी पूर्णा ;
वह प्रयोग-भू भी अध्यापन की नव-नव विधि-गतियों की

शारीरिक-श्रम-गौरव-रक्षा वहाँ सिखाई जाती थी,
संस्कृति, ज्ञान, बुद्धि, प्रतिभा, तप का पद भी संमानित था ;
आत्मिक, नैतिक, दैहिक उन्नति का लेकर आधार सुदृढ़,
उस विद्यालय के विकास का क्रम अबाध, अनुशासित था ।

किंतु, पता था नहीं मनुजता-सेवा के उस उपवन को
कि था उसे मिटवाने का षड्-यंत्र दूसरी ओर हुआ ;
राज-द्रोह की गंध बताई गई नए विद्यालय में
और विदेशी शासन का रुख़ उसकी ओर कठोर हुआ !

३

हरिपुर की कन्याएँ वर्षों से बंदी रहती आई थीं
घोर अशिक्षा की ; उनको था मिलता नहीं कहीं भी स्थान
शिक्षा-द्वारा आत्मोन्नति का ; केवल एक पाठशाला थी
भोला गुरु की, जिसमें उनका था निषेध, जो था अपमान ।

श्यामा का विद्यालय खुलते ही सहसा वे बंधन टूटे,
आमंत्रण शिक्षा-समीर का पा, जागे मुरझाए प्राण ।
पहली बार प्रयोग हुआ जब वह सह-शिक्षा का हरिपुर में,
पिंजर-मुक्त पक्षियों-जैसा कन्याओं ने पाया त्राण ।

जीवन के एकांगीपन की कारा से छूटी कन्याएँ ;
आम्र-कुंज के नव विद्यालय में उनका जीवन-संगीत,
मानवता के स्वस्थ दूसरे अंग बालकों के स्वर से मिल,
मुक्ति-गगन में लगा हिलोरें लेने, पा आनंद पुनीत ।

और बालकों की भी प्रतिभा छूटी नीरसता-बंधन से ;
उसे बालिकाओं की प्रतिभा का पाकर सान्निध्य ललाम,
एक नया आयाम मिल गया स्वस्थ चेतनाओं की गति का,
जिससे उनकी प्रगति पंख पा सकी प्रेरणा के अभिराम ।

शैशव की यह सह-शिक्षा भी ग्राम-खलों को नहीं सुहाई ;
अभिनव विद्यालय की निंदा का यह बना लिया आधा
उन सबने, कानाफूसी वे इसपर करने लगे निरंतर ;
भोला-गुरु के स्वार्थ-शिविर के बने ग्राम-खल वे हथियार

अशिव रसिकता के अभ्यासी लोगों का यह कुरुचिपूर्ण दल,
जिसके लिए जन्म से लेकर मरने तक नारी का स्था
मात्र वासना-साधन का था, अपनी कलुषित चर्चाओं में
नव-विद्यालय पर करता था कुत्सा-बाणों का संधान

हो चौपाल, खेत, अमराई या चबूतरा मंदिर का हो,
जहाँ बैठते दुष्ट गाँव के, वहीं दिखाते अपने हाथ
कहते भाँति-भाँति से भोले ग्राम-वासियों से प्रतिदिन वे —
श्यामा रही बिगाड़ लड़कियाँ, पढ़ा-पढ़ा लड़कों के साथ

और तीसरी ओर 'धर्म' के स्वार्थी, पाखंडी 'रखवाले'
कहने लगे—किया श्यामा ने धर्म पुरातन बंटाधार
पास-पास बैठाकर सबको वह अपने उस विद्यालय में
पाठ पढ़ाती है, वह चाहे द्विज हो या हो "डोम , चमार"

धर्म भ्रष्ट सबका करती है, जाति नष्ट सबकी करती है,
मुफ्त पढ़ाने के मिस श्यामा फैलाती है स्वेच्छाचार
उठो पुराने जाति-धर्म की परम्परा के रक्षक वीरो,
बंद कराओ यह विद्यालय, करो धर्म का तुम उद्धार

चौथा शिविर और था, सत्ता का, धन का जो परिपोषक था,
'राज-भक्त' लोगों के मुखिया थे गजसिंह, हुलासीराम
"राज-द्रोह की शिक्षा देती है श्यामा उस विद्यालय में,
हो समाप्त विष-बेल गाँव से !" यह सुझाव था उनका काम

इन चारों शिविरों के असली संचालक थे भोला गुरुजी,
जिनकी चटशाला चौपट हो गई क्रांति का पा आघात
नव-विद्यालय के विरुद्ध वह उकसाते थे सकल खलों को ;
उनके मन की बात बन गई उन नीचों के मन की बात

'राज-भक्ति', पाखंड, दुष्टता, स्वार्थों के शिविरों की सत्ता
एक हो गई भोला-गुरु के केन्द्र-सूत्र का पा आधार
चारों ने मिलकर श्यामा के नव-विद्यालय की जड़ खोदी ;
एकमात्र शरणस्थल सबका अन्यायी शासन का द्वार

जब ऊँची पुकार उन सबकी शासन के कानों तक पहुँची,
सत्ता के अधिकारी भड़के, 'राज-द्रोह' की सुनकर बात
एक दिवस प्रतिबंध लग गया नव-विद्यालय पर श्यामा के,
हुआ अचानक संस्कृति के उस कुसुम-कुंज पर वज्राघात

जब विद्यालय बंद कर दिया वह विदेशियों के शासन ने,
छात्र, शिक्षिकाएँ, छात्राएँ, शिक्षक सभी हो उठे म्लान
पर, श्यामा बोलीं—स्वदेश की स्वतंत्रता की बलिवेदी पर
यह मेरे जीवन के पहले अर्घ्य-सुमन का है बलिदान

मैं, निराश हो, बैठ न सकती : कभी करूँगी नव-आयोजन ;
फिर, उसके भी निर्मूलन पर, अथक करूँगी नया प्रयास
तुम लोगों को भी धीरज से सहनी होंगी सारी चोटें ;
रखना होगा मातृ-भूमि के भव्य भविष्यत् पर विश्वास

किंतु, एक है प्रश्न सामने, जिसका उत्तर सोच न पाती ।
करता शासन विदेशियों का है जो हमपर नित्य प्रहार
उन अन्यायों, अत्याचारों का इस पशु-बल की सत्ता के
शस्त्रहीन जनता से कैसे हो सक्रिय, सशक्त प्रतिकार

विदा-काल में हुए
नर-नारी-शिशु,
सघन घटा-सी कुछ
भरे हुए थे कंठ

पशु, पक्षी, बेलें, त
नीरव भाषा
धरती-माता की
उनका प्यारा

निस्स्तब्धता भंग
तम का राज्य
रहे कुछ समय सु
जब नव-रवि क

जाओ, सहो कष्ट
करो प्रतीक्षा
है दायित्व ले च
चले शरीर

ग्राम-खलों के च
माना पर्व-स
पर, न पता था
उनके छल

भूमि-स्वामियों
यंत्र-स्वामि
विदु-विंदु, श्रम
चंदन को

पराधीनता के बंधन मे
कब तक ऐसा नेता वीर
उनको रए ऐसा, जिसमे
हो संघर्षों में, हो न अधीर

पर, उससे भी अच्छा है यह
का सक्रिय, सामूहिक प्रतिकार
सोचें नेता और मनीषी
के प्रतिरोधात्मक कौन प्रहार

चले सभी अपने स्थानों को,
ला भी लौटे निज गृह की ओर
खरा संस्कृति का केंद्रस्थल;
ख और सामने समय कठोर

ंकुर श्यामा का उखड़ा था,
ने लगा वेग से स्वस्थ विकास
श्यामा, रमा और माधव के
स्या; म्लान हुआ जीवन-उल्लास

अभी असंभव नया चलाना,
ही के कुछ दिन मैं लूँगी काम
लिए कृष्णपुर रहना होगा,
अब करना होगा हमें प्रणाम

ले: कैसे भेजें? कैसे, इनको
पुर में अपना जीवन-निर्वाह
जैसे जीवन-भर खेतों मे
होगी वही नगर में मेरी राह

काम करूँगा वहाँ रात-दिन किसी कारखाने में मैं ; जो
उससे पाऊँगा, लाकर दे दूँगा सब तुमको तत्काल
कहा रमा ने—मैं भी प्रतिदिन, किसी कारखाने में जाकर,
काम करूँगी ; मजदूरी सब इन चरणों में दूँगी डाल

श्यामा बोलीं—श्रम से मुझको भी है प्रेम, करूँगी मै भी
कोई काम नगर में, जिससे मैं भी बँटा सकूँ कुछ हा
उस व्यय में, जो करना होगा तुम लोगों को बड़े नगर मे
शिक्षा और भरण-पोषण में, रखकर इस चदन को साथ

इस मृदुला के लिए तुम्हें भी, माधव-भैया, करना होगा
त्याग ; इसे ले, करना होगा नगर कृष्णपुर में अब वास
माधव बोले—दुर्गा होगी सहमत इससे, मृदुला को ले
हम भी वहीं रहें, हो इसकी शिक्षा का परिपूर्ण विकास

तुम चिंता मत करो ; करूँगा मैं व्यवसाय कृष्णपुर में रह ,
आधा समय बचाकर उससे, देश-कार्य में दूँगा साथ
पूरा समय लगाकर तुम कर सको देश का हित, जन-सेवा,
इसके लिए पूर्ववत् मेरा खुला मिलेगा तुमको हाथ

न था ग्राम में कुछ भी अपना, फिर भी, क्यों छाती भर आई
मोहन की, जब लगे छोड़ने वह हरिपुर का अपना वास
बार-बार वह घूम-घूमकर किस ममता से देख रहे थे
खेत, वृक्ष, झाड़े की कुटिया, कुआँ, ताल, पगडंडी, घास

रमा और दुर्गा के नयनों से आँसू झरते जाते थे :
चंदन, मृदुला भी थे, चलते समय गाँव से, बहुत उदास
माधव, श्यामा की मुख-मुद्रा थी गंभीर, किंतु, उनको भी
ग्राम-त्याग लग रहा लक्ष्य-हित दीर्घ राम का-सा वनवास

विदा-काल में हुए इकट्ठे बहुसंख्यक जब ग्राम-निवासी,
नर-नारी-शिशु, सबके नयनों में थे स्नेह-अश्रु अनमोल
सघन घटा-सी कुछ ऐसी घिर आई ममता की हृदयों में,
भरे हुए थे कंठ सभीके, मुख से नहीं निकलते बोल

पशु, पक्षी, बेलें, तरु, पल्लव, भावाविष्ट हुए सब, मानो,
नीरव भाषा में देते थे मर्म-व्यथा का कुछ संकेत
धरती-माता की तो, मानो, छाती फटती थी वियोग में,
उनका प्यारा भूमि-श्रमिक जा रहा दूर परिवार-समेत

निस्स्तब्धता भंग श्यामा ने की, आश्वासन दे यों सबको—
तम का राज्य नहीं रह सकता किसी ग्राम, पुर में चिर-काल
रहे कुछ समय सुखी ज्योति के शत्रु, किंतु, वह क्षण आता है,
जब नव-रवि की रश्मि-शिखा से फिर जल उठता है तम-जाल

जाओ, सहो कष्ट यह भी सब ; सारा जीवन व्यथा तुम्हारी!
करो प्रतीक्षा—कभी दासता के बंधन से पावें त्राण
है दायित्व ले चला हमको चंदन, मृदुला की शिक्षा का ;
चले शरीर नगर को, पर, हैं निशिदिन साथ तुम्हारे प्राण

ग्राम-खलों के चारों शिविरों ने समवेत हर्ष-ध्वनि करके
माना पर्व-सदृश श्यामा की इस टोली का ग्रामत्याग
पर, न पता था उन्हें जा रही है जो चिनगारी इस स्थल से,
उनके छल-पाखंड जलाने को लौटेगी बनकर आग

भूमि-स्वामियों के चिर-शोषित मोहन, रमा, कृष्णपुर में आ,
यंत्र-स्वामियों के शोषण के बन शिकार, कर शोणित-द
बिंदु-बिंदु, श्रम-स्वेद बहाकर, करने लगे कठोर तपस्या,
चंदन को शिक्षा दिलवाने को, लेकर ऊँचे अरमान

माधव, दुर्गा ने भी मृदुला की शिक्षा के हेतु, शक्ति-भर,
छोड़ ग्राम पुरखों का, आकर किया नगर में पूर्ण प्रयास
सहन असुविधाएँ अनेक कीं ; एकमात्र यह लक्ष्य बनाया—
मृदुला की शिक्षा-गति अविरत, हो उसका सर्वोच्च विकास

श्यामा भी चांदन, मृदुला की शिक्षा की चिंता रखती थीं,
साथ-साथ व्यापक अभीष्ट का भी करती थीं अनुसंधान
कोई पथ दासत्व-शृंखला-खंडन का दे उन्हें दिखाई,
इसके लिए निरंतर उनके तड़पा करते थे मन-प्राण

चंदन ने, कुछ समय बाद, उस विद्यालय में स्थान पा लिया
जो उस युग में रहा कृष्णपुर में शिक्षा के लिए प्रसिद्ध
किंतु, ज्ञात होते ही उनकी जाति-कथा शिक्षक-छात्रों को,
अपमानों के बाण कर उठे उर उनका निशिवासर विद्ध

शिक्षक, छात्र कुलीन, धनिक, जो नैतिकता से सूने होते,
वही अधिक ताने देते थे ; सहते चंदन रहकर शांत
कालकूट विष शिव पीते थे जैसे अविचल मुद्रा रखकर,
चंदन करते यत्न कि वह भी रहें प्रहारों में अक्लांत

शारीरिक सौंदर्य प्रकृति ने उन्हें दिया था अकृपण होकर ;
स्वास्थ्य-शक्ति-संवर्धन प्रतिदिन किया उन्होंने, कर व्यायाम
प्रतिभा प्रखर, विलक्षण मेधा भी निसर्ग से उन्हें मिली थी,
ज्ञान बढ़ाते रहते थे वह, कर स्वाध्याय अथक, अविराम

एक-एककर, सब अभिमानी छात्र पिछड़ते गए निरंतर
उनसे ; उन्हें मिल गया अपनी कक्षा में सर्वोत्तम स्थान
छात्र-वृत्ति के साथ मिला था द्वेष और ईर्ष्या का विष भी ;
शत्रु बन गए दुष्ट छात्र कुछ, देख दलित का अभ्युत्थान

कुछ अनुदार-प्रकृति शिक्षक भी उनकी उन्नति से कुंठित थे ;
उनकी बाधाओं को भी वह, हँस-हँसकर, जाते थे टाल
उपालंभ का कोई अवसर नहीं किसीको वह देते थे ;
जब जो कार्य बताता कोई, उसको वह करते तत्काल

क्रीडांगण पर भी चंदन ने प्राप्त किया अधिकार अनूठा,
पाते पुरस्कार, विजयश्री की वर-माला वह प्रति-बार
नर-नारी दर्शक बहुसंख्यक होते परम प्रशंसक उनके,
जब वह प्रतियोगिता-भूमि पर करते निज कौशल-विस्तार

उन्हें पुस्तकालय थे प्रिय, वह मधु-व्रत, ज्ञान-कोष के प्रेमी,
ग्रंथ खोजने, लाने, पढ़ने में पाते आनंद अपार
जब वह तन्मय होते उनमें, तब समाधि-सी लगती उनकी,
यह जग विस्मृत होता, बसता उनका एक अलग संसार

वाद-विवादों में भी उनकी भाषण-कला प्रसिद्ध हो चली,
शत-शत श्रोताओं पर चंदन जादू-सा देते थे डाल
दूर-दूर आमंत्रित हो, वह उनमें जीत-जीतकर आते ;
विजय-चिह्न वह इतने लाए, विद्यालय हो गया निहाल

छात्र महाविद्यालय के जब चांदन बने, वहाँ भी उनको
छात्र और छात्राओं में हो गया प्राप्त गौरव-मय स्थान
यह सब नहीं भाग्य की लीला ; कठिन परिश्रम, सतत साधना
इसमें उनकी लगी, उन्होंने किया स्वयं ही निज उत्थान

सत्ता, धन, कुलीनता का पा आश्रय, जो बढ़ते जाते हैं,
वे न जानते—कितना दुष्कर है उठना अपने बलआप
वे न जानते—कितना दुःसह है दरिद्रता का परिपीड़न ;
वे न जानते—कितना दंशक है अछूतपन का अभिशाप

चंदन ने सर्वोच्च छात्र का गौरव-मय पद ऐसा पाया,
किया एक दिन एक अनुभवी प्राध्यापक ने व्यक्त विचार–
जन्म कुलीन, धनिक घर में यदि पाया होता इस चंदन ने,
तो, करता, विदेश में शिक्षा पा, ऊँचे पद पर अधिकार

समय महाविद्यालय में कुछ चंदन की शिक्षा का बीता ;
जब उनके उज्ज्वल भविष्य का मिला परिजनों को संदेश
उत्कंठा, उत्साह एक दिन लेकर नूतन अपने उर में,
उसी महाविद्यालय में तब मृदुला ने भी किया प्रवेश

इसके पूर्व किया मृदुला ने कन्या-विद्यालय में पूरा
शिक्षा-क्रम, रह नगर कृष्णपुर में माधव, दुर्गा के साथ
रहा निरंतर कुश-कंटक-मय जीवन-पथ पर नए नगर के,
चंदन के समान, मृदुला के भी सिर पर श्यामा का हाथ

कन्या-विद्यालय में मृदुला, जो श्यामा के विद्यालय की
तेजस्वी छात्रा थीं, पाती गईं अनवरत ऊँचा स्थान
अंतर उनके लिए न हरिपुर और कृष्णपुर कुछ आया :
शिक्षा उनका प्रथम लक्ष्य था ; रहा उसीपर उनका ध्यान

हरिपुर में वह, सह-शिक्षा की संस्कृति में पल, बड़ी हुई थीं,
अतः, कृष्णपुर का सह-शिक्षा का वह ऊँचा केंद्रस्थान
स्वाभाविक ही लगा उन्हें, वह दिग्भ्रम में न पड़ीं उसमें भी ;
शांत भाव से करने उसमें लगीं ज्ञान का अनुसंधान

पर, निज कक्षा के छात्रों से जब मृदुला आगे बढ़ निकलीं,
उनमें एक सनसनी फैली, जागा जिज्ञासा का भाव
उनकी गति-विधि ने छात्रों का अधिक ध्यान फिर क्रमशः खींचा ;
पर, उनके प्रतिभा-विकास पर पड़ा किसी स्थिति का न दबाव

भाषण, लेखन, खेल, सभीमें मृदुला की गति तीव्र देखकर,
सज्जन प्राध्यापकगण उनका लगे बढ़ाने सब उत्साह
अच्छे ग्रंथों के वाचन में भी वह सबसे आगे निकलीं ;
देवालय-पथ से प्रियतर थी उन्हें पुस्तकालय की राह

हुआ परीक्षा-फल जब घोषित, शिक्षक, छात्र चकित थे सारे—
मृदुला ने सर्वोच्च स्थान का प्राप्त अपूर्व किया अधिमान
मिले उन्हें इतने अभिनंदन, गौरव, आदर, स्तुति, गुण-वर्णन
कि वह चाहने लगीं कि उनसे बचने को हो गोपन-स्थान

वह चंदन से जाकर बोलीं—दूर मुझे ले चलो यहाँसे,
जिससे इनसे बचूँ; प्रशंसा के असह्य हैं ये उद्गार
अभिनन्दन, गौरव, स्वागत के सुमनों के इस बड़े ढेर में
दबी जा रही, करो शीघ्र तुम स्तुतियों से मेरा उद्धार

बचपन से देखा, जाना था मृदुला को चंदन ने, अब तक
उनके पूरे किए कई थे कलुषहीन आग्रह, अक्लांत
किंतु, आज निर्मल, पर, अद्भुत आग्रह यह वह लेकर आईं !
कैसे पूर्ण करें यह इच्छा ?—चंदन का मन चिंताक्रांत

चंदन को जब चिंतित देखा, मृदुला के प्रवाल-अधरों पर
खिची मधुर मंदस्मित-रेखा ; चंदन अब न रह सके शांत
लगी चुनौती उनकी मेधा को उनकी वंकिम स्मित-रेखा ;
तत्क्षण सोच लिया चंदन ने—उचित कौन-सा स्थल एकांत

जब चंदन मृदुला को लेकर चले भीड़ से बाहर, उनपर
शत-शत नवयुवकों की वेधक, ईर्ष्या-युक्त पड़ी तब दृष्टि
नीलकंठ शिव की सहिष्णुता का कर स्मरण निमिष-भर, चंदन
पीकर पचा गए उन कलुषित नयनों की वह सब विष-वृष्टि

चंदन, मृदुला, मैर-गाड़ियों से, पहुँचे जिस स्थल पर, वह था
व्यस्त नगर के कोलाहल से दूर, भव्य, अद्‌भुत, रमणीक,
था परिपूर्ण प्रकृति के वैभव, सुन्दरता, निर्मलता से वह,
मानो, स्वार्थ-पूर्ण संघर्षों की जगती में शांति-प्रतीक।

समय लगा कुछ वहाँ पहुँचने में उनको, पर, लक्ष्य-स्थान पर
पहुँच, उन्होंने पाया जीवन का जैसा अपूर्व आनंद
वह चिर-स्मृति की वस्तु बन गया ; मन उनके आश्वस्त हो गए,
बंधन-मुक्त खगों-से उड़कर दिव्य-भाव-नभ में स्वच्छंद।

उत्तर में उज्ज्वल प्रपात कुछ दूरी पर दिखलाई देता,
दक्षिण में प्रवाह का देता था दिखलाई द्रुत-गति ढाल,
ऊर्मिल वैभव था दोनों के मध्य विमल-तोया सरिता का,
पश्चिम में अस्ताचल-गामी रवि, मानो, प्रवाल का थाल।

पूर्व-दिशा में तट पर बैठे थे सरिता के चंदन, मृदुला ;
अरुण-बिम्ब, जल मे प्रतिबिम्बित, थे मनोज्ञ लग रहे दिनेश ;
शीतल, मंद पवन संध्या का पुलकित करता था तन, मन को,
उसके झोंकों से मृदुला के कंपित हो उठते कुछ केश

उज्ज्वल-श्यामल, सबल, सलोने चंदन मेघश्याम-सरीखे,
विद्युल्लतिका-सी मृदुला थीं गौर सुशोभित उनके पास
तन्मय हो, सौंदर्य प्रकृति का रहे देखते कुछ क्षण दोनों ;
नहीं मौन में समा सका जब प्राणों का अदम्य उल्लास,

तब चंदन ने कहा—सुरक्षा देता कौन प्रकृति से बढ़कर ?
मृदुला, तुम्हें प्रशंसा से मिल गया यहाँ मनचाहा त्राण !
मै भी कई दिनों में अपने इस प्रिय स्थल पर आज आ सका,
पाकर शुभ सान्निध्य प्रकृति का, हैं प्रसन्न मेरे भी प्राण

मृदुला बोलीं—मैंने आकर भंग किया एकांत तुम्हारा,
जिसके बिना प्रकृति-दर्शन की नहीं समाधि हो सकी प्राप्त
तुम्हें ; समाधि बिना निष्फल है आज तुम्हारा यहाँ आगमन ,
मेरे कारण इस शांतिस्थल पर नीरस अशांति है व्याप्त

चंदन बोले—तुम्हें प्रशंसा अपनी नहीं सुहाती, मृदुला,
इस गुण ने मेरे मन में है दिया तुम्हें आदर का स्थान
पर, यह कैसी प्रकृति तुम्हारी कि तुम व्यर्थ निंदा करती हो
अपनी ? यह क्या नहीं तुम्हारी मानवता का है अपमान

यह सुन मृदुला के अधरों पर मंदस्मित की आई रेखा,
जिसे देख चंदन के मन में आया सहसा ऐसा भाव—
मानवता के उपवन की यह कली जुही की शुभ्र खिल उठी !
चंदन भी मुसकरा उठे, कर पाए स्मित का नहीं दुराव

देख मुसकराते चंदन को मृदुला ने यह मन में सोचा—
विमल मनुजता के उपवन का उज्ज्वल-नील खिला जलजात
ये अवदात भाव दोनों के प्रकट न हो पाए दोनों पर ।
ऐसे अवसर पर क्यों अविदित रह जाती है मन की बात

मौन और मंदस्मित मिलकर इन्द्रधनुष-सा तान रहे थे
दोनों के भावोज्ज्वल हृदयों में, बाहर निसर्ग का रंग
गहरा होता जाता था ; हो गए निमिष वे मधुर-विमल थे !
युगल-समाधि कुछ क्षणों में की मृदुला ने यह कहकर भंग—

सच कहना, चंदन, क्या मेरा साथ प्रशांत प्रकृति-दर्शन में
हुआ सहायक आज तुम्हारे या मैंने डाला व्याघात
बोले चंदन—मृदुला, मुझको आज तुम्हारे साथ प्रकृति का
दर्शन पा, जो सुख पहुँचा, वह नहीं बताने की है बात

दो निष्कलुष हृदय जिस क्षण, मिल, करते हैं निसर्ग का दर्शन,
    उस क्षण का उनके जीवन में होता है मंगल-मय स्थान
और अधिक निर्मल बनते हैं कोमल भाव हृदय के उनके,
    और अधिक वे किया चाहते सात्विक स्नेह, महत् बलिदान

पर, तुमने तो मुझसे चाहा स्थान कहीं छिपकर बचने को
    आडंबर-मय अभिनंदन से ; भूल गईं तुम वह तो बात
पहले यह तो कहो कि क्या वह सिद्ध तुम्हारा हुआ प्रयोजन !
    क्या तुम शांति पा सकीं ? मुझको स्पष्ट हुआ न अभी तक ज्ञात

मृदुला बोलीं—सचमुच, आकर यहाँ, बच गईं अभिनंदन के
    उत्पातों से, मिली स्नेह-मय मुझे प्रकृति-माता की गोद
कुछ क्षण प्रतिदिन, साथ तुम्हारे आ, यदि यहाँ बैठ पाऊँ, तो,
    पाऊँ शांति, प्रेरणा अनुपम, जीवन का आदर्श प्रमोद

चंदन बोले—सरल-प्रकृति तुम, विमल हृदय से, यह कहती हो,
    पर, मैं स्वीकृत नहीं करूँगा, देवि, तुम्हारा यह प्रस्ताव,
मर्यादाएँ हम दोनों की, संस्कृति है प्राचीन देश की ;
    हम न बदल पाए हैं अपने इस समाज का अभी स्वभाव !

मुझे ज्ञात है—नहीं कलुष है कोई मन में, सुमुखि, तुम्हारे,
    जब तुम नित्य प्रकृति-दर्शन की कहती हो मुझसे यह बात ;
यह भी है विश्वास मुझे—मैं आत्म-नियंत्रण का अभ्यासी,
    आ सकता हूँ नित्य तुम्हारे साथ यहाँ अकलुष, अवदात।

किन्तु, त्याग, बलिदान बनाते निर्मलतर कोमल भावों को,
    अतः, उचित हो, यदि हम छोड़ें यह सुदूर, निर्जन एकांत,
हों न औपचारिक बातों से विचलित हम शिक्षा-स्थानों की,
    प्राप्त करें निज लक्ष्य उच्चतर, चल शिक्षा-पथ पर निर्भ्रांत !

आत्मनियंत्रित मृदुला के मुख पर, यह सुन, जो आभा आई,
उससे व्यक्त हुआ कि उन्होंने दिया हृदय में ऊंचा स्थान
चांदन को उनके इस संयम, इस विवेक, बलिदान, त्याग पर ;
चांदन ने भी, उनके उर के भावों का करके अनुमान,

तृप्त भाव से अरुणाभा-युत रश्मि-विभव दिनकर का देखा ;
मृदुला ने भी अपने लोचन लगा दिए पश्चिम की ओर।
तन्मय हो, आत्मस्थ, देखते थे जब दोनों रूप प्रकृति का,
चांदन के मस्तक पर सहसा हुआ दंड-आघात कठोर।

किया घमंडीसिंह छात्र ने यह प्रहार पीछे से आकर,
तीन दंडधारी आए थे और छात्र उस खल के साथ ;
विद्युत्-गति से, सिंह-शौर्य से, चांदन ने, झट उठ, फिर पीछे,
डंडा छीन, हाथ में लेकर, पकड़ा उसका कंपित हाथ।

इतने में पीछे से आकर रघुवर ने उनको ललकारा ;
इधर बुलाकीराम छात्र से छीन लिया मृदुला ने दंड ;
रघुवर, चांदन, मृदुला, उनके, दंड-हस्त हो, डटे सामने ;
छिड़ा प्राकृतिक स्थल पर, मानो, देवासुर-संग्राम प्रचंड।

रघुवर का भोला की हरिपुर-चटशाला से वह निष्कासन !
उस निर्दोष छात्र ने समझा था वह निज दारुण अपमान !
प्रतिशोधानल धधक उठा था उसके उर में उनके प्रति, जो
उसके निष्कासन के कारण थे ; उनका था उसको ध्यान !

रघुवर ने आरंभ तपस्या की कठोर, अध्ययन निरंतर
मनोयोग से करके, उसने स्वयं बनाई थी निज राह।
उसने निज निर्वाह-द्रव्य भी किया उपार्जित श्रम के द्वारा ;
आए विघ्न अनेक, किंतु, था अक्षय रघुवर का उत्साह।

श्यामा, माधव के जाने पर हुए निराश छात्र हरिपुर के,
उनके असंतोष को रघुवर ने रचनात्मक रूप प्रदान
किया ; न भोला की चटशाला जमने दी ; छात्रों को लेकर
नई पाठशाला खुलवा दी ; दिया विजय को शिक्षक-स्थान

वयोवृद्ध, न्यायप्रिय, शिक्षक वह संतोषी, किंतु, न उनकी
राजनीति में रुचि थी ; केवल अध्यापन से उनको प्रेम,
जो कुछ जो दे देता, उसमे वह लेकर, वह तृप्ति-लाभ कर,
छात्रों की उन्नति में अपना सहज समझते योग-क्षेम

अन्यायी भोला की चौपट चटशाला करवा रघुवर ने
सुजन विजय को छात्रों में हरि-पुर के मान्य दिलाया स्थान
कर उत्तीर्ण परीक्षा, उसने अगली शिक्षा-दीक्षा पाने
नगर कृष्णपुर को, पौरुष की पूँजी लेकर, किया प्रयाण

उन्हीं दिनों पढ़ने को उनके शत्रु घमंडी और बुलाकी,
जिनके कहने पर हरिपुर में उनका निष्कासन-अपमान
हुआ, कृष्णपुर में आए, निज वैभव के कारण उनका कुछ
हुआ वहाँ संमान, बना कुछ छात्र-वर्ग में उनका स्थान।

पर, अपने दुर्गुण-दुष्कृत्यों से क्रमशः वे निंद्य हो गए ;
शिक्षा में पीछे रह, आगे उत्पातों में रह, खलराज,
सबसे लांछित होकर, अपना अलग संगठित कर बैठे वे
नीच समाज-कंटकों, छात्रों का अन्यायी दुष्ट-समाज।

रघुवर का नेतृत्व प्राप्त कर, सज्जन छात्रों ने उन दुष्टों
और लंपटों का करना कर दिया शुरू डटकर प्रतिकार,
मृदुला का नेतृत्व-लाभ कर दृढ़ छात्राओं ने भी उनपर,
हो संगठित, चप्पलों से थे कई बार कर दिए प्रहार।

भूल न पाते थे वैसे भी रघुवर हरिपुर का निष्कासन,
देख घमंडी और बुलाकी की शठता वह बारंबार
नगर कृष्णपुर में भी, उनसे क्रुद्ध रहा करते थे प्रायः,
करते थे उनके विरुद्ध वह छात्रों में अविराम प्रचार।

मृदुला ने तो उन्हें बनाया था छात्राओं में अपयश का,
रोष, हास, उपहास, व्यंग्य का, इतना अधिक घृणा का पात्र
कि वे शत्रु उनके बन बैठे ; रघुवर के तो पहले से थे,
क्योंकि, हो गए परिचित उनसे, रघुवर के कारण, सब छात्र।

सबसे अधिक शत्रुता उनकी चंदन से थी, क्योंकि, उन्होंने
रघुवर, मृदुला को विरुद्ध था उनके दिया प्रेरणा-दान ;
षड्यंत्रों का जाल बिछाया करते थे उनके विरुद्ध वे,
दुष्ट चाहते थे वे मिलकर चंदन के ले लेना प्राण !

अभिनंदन के बाद उन्होंने जब मृदुला को जाते देखा
विद्यालय-प्रांगण से उस दिन एकाकी चंदन के साथ,
वे भी पैरगाड़ियों पर चल दिए उधर, उनके पीछे ही ;
गेंद खेलने के डंडों से सज्जित उन चारों के हाथ।

रघुवर ने जब जाते देखा उन्हें उधर, उनका मन शंकित
हुआ ; चल दिए लेकर वह भी अपने कर में डंडा एक ;
वहाँ पहुँच, रघुवर ने देखा दुष्ट घमंडी को करते जब
चंदन पर आघात एक, तब किए उन्होंने वार अनेक।

रघुवर, चंदन, मृदुला, तीनों के आघात न सह पाए वे ;
चंदन के प्रताप से भागे छोड़ शीघ्र ही वे मैदान !
उस दिन शौर्य दिखाया जैसा चंदन ने, वैसा न किसीने
बहुत दिनों से देखा ; उनका किया सभीने, सुन, गुण-गान।

घर लाने पर पता चला—जो किया गया था, पीछे से आ,
    चोरी से प्रहार, उसका सिर पर आघात हुआ गंभीर ;
सब आश्चर्य-चकित थे—कैसे, उस प्रहार को सह, लड़ पाए
    चंदन ! पर, थे चंदन अद्‌भुत सहनशील, साहस-मय, वीर !

मृदुला ने शुश्रूषा चंदन की, कर तन, मन, प्राण समर्पित,
    ऐसी की कि बनाया अभिनव, त्याग, धैर्य, तप का इतिहास !
उन्हें मृत्यु के मुख से लौटा लाई वह बलिदानी बाला !
    साश्रु दृगों में भारत-माता के चमका जीवन-उल्लास !

४

पृष्ठ-भूमि बन चुकी उचित थी, तूर्य-नाद कर चुके तिलक थे—
"जन्म-सिद्ध अधिकार हमारा है स्वराज्य, वह लेंगे ही हम !"
तंद्रा छोड़ युगों की, भारत की जनता ने जाग्रति की ली
अद्भुत अँगड़ाई थी, जिससे उभरा उग्रांदोलन का क्रम ।

लोकमान्य के लंबे कारा-कष्टों ने जनता के उर में
विषम-वेदना दंशन की-सी थी ऐसी उत्कटतम भर दी,
जिसने अवधि विदेशी, शोषक शासन के जीवन की दु:सह,
मनोभावना में भारत की जनता की, थी लघुतर कर दी ।

लोकमान्य ने जनता को निज भाषण, लेखन, कार्य आदि से
संघर्षों का, कर्मयोग का पाठ पढ़ाया जो अविनाशी,
उसने उसके मूर्छित जीवन की जड़ता को हिला दिया था,
कर दी निष्क्रिय, बंदी प्राणों की थी दूर असह्य उदासी ।

जीवन-व्यापी व्यथा-सहन से, लंबे कारावास-कष्ट से,
घोर परिश्रम से स्वतंत्रता की वेदी पर जीवन अर्पित
किया, समय के पूर्व, साहसी, नर-केसरी तिलक ने अपना ।
भारत के जन-गण-मन की उस बलि से हुई चेतना ऊर्जित ।

जन-समूह जो उमड़ा उनकी शव-यात्रा में, उसने उनकी
लोकप्रियता से सब जग को परिचित अच्छी तरह कराया
उनके तप, संघर्ष, उग्रता का प्रसाद भारत के घर-घर,
ग्राम-ग्राम की, नगर-नगर की कोटि-कोटि जनता ने पाया

मर्मस्पर्शी वह घटना भी सुनी विश्व ने, जिसमें कोई
भावुक युवक चिता में उनकी कूद पड़ा, शोकाकुल होकर
ऐसा था बलिदान सिखाया लोकमान्य ने अपने युग के
तरुण-तरुणियों को, जिससे था स्तब्ध, विनत, भावार्द्र विश्व-भर

श्यामा, चंदन, मृदुला, माधव, दुर्गा रमा, सभीके सहसा
कंठ हुए अवरुद्ध, हृदय भर आए, सजल हो गए लोचन
लोकमान्य की अंतिम यात्रा के जुलूस की खबरें सुनकर ;
प्राणार्पण करने को उत्सुक हुए देश-हित वे मन-ही-मन

इधर एक बंगाली शिक्षित युवक मिला चंदन से आकर ।
वह था शिष्य उन्हीं स्वामी का, जो, अज्ञातनाम, हरिपुर ं
कुछ दिन रहे, शहीद हुए फिर शासन की कठोर कारा में ।
इससे लहर उठी विप्लव की उस साहसी तरुण के उर में

बंग-भंग आदिक के शासन के अन्यायों ने युवकों में
जो सशस्त्र विप्लव की चेष्टा का अदम्य उत्साह जगाया
उसने भी उस वीर तरुण को, क्रांति-भावना-युक्त बनाकर,
शस्त्रयुक्त-विद्रोह-दलों के संगठनों में सतत लगाया

उसने चंदन, मृदुला, रघुबर को निज पथ पर, धीरे-धीरे,
आकर्षित करने की चेष्टा की, अपना उद्देश्य बताया
तीनों को, एकांत स्थान पर बैठ, क्रांति की चेष्टाओं का
युवक-युवतियों की, साहस-मय, रोमांचक इतिहास सुनाया

कैसे शिक्षित तरुणों ने सुख का पथ छोड़ा ; कारा, फाँसी,
निर्वासन, निर्यातन के दुख-कष्टों को, हँस, गले लगाया।
सुन-सुन, चंदन, मृदुला, रघुवर के हृदयों में शासन के उन
दमनों के विरुद्ध विद्रोही भावों का सागर लहराया।

उन तीनों ने शस्त्र-क्रांति के संयोजक उन बलि-वीरों की
त्याग-कथाएँ सुन, उनकी स्मृति में सिर बारंबार झुकाया।
कहा नवागंतुक ने उनसे—विप्लव-दल में शामिल होकर,
शस्त्र-शक्ति से ध्वस्त करो यह अन्यायी शासन की माया।

विवश भाव से सहन करेंगे कब तक यह दासत्व विदेशी
शासन का हम भारत-वासी, यह निर्लज्ज, हीनतम जीवन?
शस्त्र उठाए बिना मुक्त हो सका न कोई देश विश्व में।
हमको भी दुहराना होगा विप्लव का इतिहास, वीर बन।

सुगम न मार्ग सशस्त्र क्रांति का, इसपर, पग-पग पर, कंटक हैं,
लंबा पंथ, न छाया इसपर, है भीषण उत्ताप निरंतर,
फिर भी, वीर इसे चुनते हैं, इसपर, हँस-हँसकर, चलते हैं;
स्वतंत्रता की बलि-वेदी पर प्राणार्पण को रहते तत्पर।

भेड़ों का समुदाय बनाकर वर्षों देश रखा शासन ने;
जिन लोगों में तेज नहीं था, ज्ञान नहीं था, उनसे आशा
क्या की जाती? शिक्षा जिनको उच्च मिली, वे स्वार्थ-परायण
बन, तोतों-से 'राज-भक्ति' की लगे बोलने कायर भाषा।

ऐसी घोर निराशा की स्थिति में तुम, विद्युत् बनकर, चमको;
मातृ-भूमि को मुक्ति दिलाओ अन्यायी, शोषक शासन के
अत्याचार, दमन, बंधन से; करो शस्त्र-विद्रोह-संगठन,
जिससे हों साम्राज्यवादियों के क्षण कठिन यहाँ जीवन के।

तीनों ने, आश्वासन देकर, कहा—हमें कुछ समय दीजिए,
जिससे हम विचार कर पावें सम्यक् इस गंभीर विषय पर।
कहा अतिथि ने—क्रांति विषय है कष्ट, मरण, जीवन, चिंतन का,
उसपर निर्णय करो, समय ले, भली भाँति तुम, सोच-समझकर !

यह भी निश्चित अभी न समझो कि तुम किए ही जा सकते हो
दीक्षित, इच्छा करने ही पर, क्रांतिकारियों के उस दल मे,
जो लेता है अग्नि-परीक्षा पहले कठिन कि जिससे जाने
वह कि स्थान क्या है इच्छुक का धैर्य, शौर्य, साहस में, बल मे।

जब चारों यह गुप्त मंत्रणा, बैठ, कर रहे निभृत निलय में
थे, तब श्यामा, बाहर से आ, सहसा बोलीं वहाँ पहुँचकर—
क्यों ? चुप क्यों हो गए, इस तरह, मुझको आती देख, एकदम ?
यहाँ कर रहे हो, यों छिपकर, बातें किस योजना गहन पर ?

अतिथि क्रांतिकारी तब बोले, हँसकर, स्वाभाविक मुद्रा में—
जीजी, तरुण-तरुणियों के कुछ ऐसे होते विषय गूढ़तर,
जिनका विवरण नहीं गुरुजनों को वे दे पाया करते हैं।
यह कह, कर प्रणाम, ले उनसे विदा, गए वह निज यात्रा पर

किन्तु, खिलाड़ी नए तीन, जो बचे, न वे मुद्रा कर पाए
अपनी वैसी स्वाभाविक ; वे हत-प्रभ-से, नतमस्तक, कुछ क्षण
वहाँ रहे श्यामा के आगे ; कारण ऐसा बता न पाए,
पा सकता संतोष अनुभवी महिला श्यामा का जिससे मन

श्यामा ने, कुछ और प्रश्न कर, पाए उनसे उनके उत्तर,
पर, उनसे उनकी यह शंका होती गई और भी दृढ़तर
कि वे छिपाना चाह रहे हैं कोई अतिगंभीर योजना
उनसे ; इससे चोट अचानक पहुँची उनके कोमल उर पर

ले मुख-मुद्रा खिन्न, चल पड़ीं श्यामा निज एकांत कुटी को।
उन्हें देख यों जाते, रघुवर हुए अति-व्यथित निज अंतर् में।
वह भी चले गए निज गृह की ओर उसी क्षण, उठ, एकाकी।
लगे सोचने वह, मन-ही-मन, बैठ, क्लांत हो, अपने घर में–

श्यामा-बुआ, दुखी हो, लेकर शंका, अविश्वास निज मन में,
गईं वहाँसे, इससे बढ़कर घटना होगी कौन कष्टकर ?
कैसे मैं उनको निज मन की व्यथा बताऊँ, कैसे उनपर
प्रकट करूँ कि विचार कपट का मेरे मन में रहा न क्षण-भर ?

चंदन, मृदुला तो उनके थे पुत्र और पुत्री-से, उनपर
स्नेह और वात्सल्य रहा यदि उनका,तो स्वाभाविक था वह ;
पर, न निकट का होने पर भी, मैं उनकी जो कृपा पा सका,
वह अद्भुत; उससे न उऋण मैं कभी हो सकूँगा, निश्चित यह।

ऐसी दयामयी को यदि हो यह संदेह कि मैं करता हूँ
उनसे कपट, छिपाता हूँ कुछ, तो यह मेरे लिए मरण से
बढ़कर है ; पर, उन्हें बताऊँ कैसे मैं रहस्य वह ? होगा
यह विश्वासघात शपथों से, क्रांति-यत्न के प्रथम चरण से।

किस क्षण में मैंने यह खाई शपथ कि मैं, प्राणों से बढ़कर,
हर रहस्य की रक्षा करने में, प्रति-क्षण, सन्नद्ध रहूँगा ;
कोई बात आदि से लेकर हुई अंत तक उन गोपन की
चर्चाओं के बारे में मैं नहीं किसीसे कभी कहूँगा !

माँ से बढ़कर श्यामादेवी पूज्य और करुणा-मय, उनका
मैं विश्वास खो रहा हूँ ; क्षति और न होगी इससे बढ़कर
किसी तरुण की ; सबसे महँगा यह बलिदान आज जीवन का
मेरे होगा मातृभूमि की स्वतंत्रता की बलिवेदी पर।

प्राण चले जाते यदि मेरे और न जाता श्यामाजी का
 यों विश्वास, सुखी मैं होता तो जीवन के अंतिम क्षण मे !
किसे बताऊँ गूढ़ व्यथा मैं अपने मर्माहत अंतर् की !
 दीक्षा के पहले ही भीषण अग्नि-परीक्षा क्रांति-वरण मे !

श्यामा ने, अपनी कुटिया में आ, हो खिन्न-हृदय, यह सोचा—
 जिनके लिए सुखाया मैंने निशि-दिन अपना रक्त आज तक,
वही छिपाने लगे कार्य-क्रम अपना मुझसे, यह दिन आया
 आज, बताऊँ किसे व्यथा मैं अपनी ऐसी हृदय-विदारक !

क्या होगा बंदी स्वदेश का, क्या होगा पीड़ित जनता का,
 कुछ भी नहीं सूझ पड़ता था ; कुछ प्रकाश था इधर दिखाया
लोकमान्य ने ; पर, अस्तंगत हुए, हंत, वह ; अगला नेता
 शून्य क्षितिज पर राजनीति के, पूर्ण ज्योति से, अभी न आया ।

चदन, मृदुला, रघुवर ने, पा ऊँची शिक्षा, छोड़ नौकरी
 करने की आकांक्षा, जीवन देश-भक्ति को किया समर्पित ,
पर, उनको ले साथ, चलूँ मैं जिसपर, ऐसा मार्ग अभी तक,
 बहुत यत्न करने पर भी, मैं स्पष्ट न कर पाई निर्धारित ।

मेरी इस अक्षमता पर यदि उन्हें क्षोभ हो, है समुचित वह ,
 और उचित यह भी कि ढूँढ़ना चाहें मार्ग स्वयं वे अपना ,
पर, यह कैसे उचित कि मुझसे मार्ग छिपा निज, साथ न लें वे
 मेरे स्वप्न-भंग पर मुझको नहीं बतावें अपना सपना ?

आत्म-ग्लानि से मरी जा रही हूँ मैं, ले सब अनुभव अपना,
 कि मुझे अनुयायिनी बनाना भी तारुण्य करे अस्वीकृत !
इससे तो अच्छा है मेरे जीवन का अवसान इसी क्षण
 होना ; श्रेयस्कर मृत होना हो रहने से यों जीवन्मृत !

चंदन, मृदुला, निभृत कक्ष में, रुद्ध-कंठ थे, साश्रु-विलोचन ;
    आत्म-ग्लानि के दंशन ने था मृत-वत् उनको उधर बनाया
सोच रहे थे—दग्ध कर गया कुछ निमिषों में सब जीवन-रस ;
    अतिथि क्रांतिकारी, दावानल बनकर, क्यों इस पुर में आया

मृदुला बोलीं—चंदन, मुझको जीवन लगता है असह्य अब ,
    श्यामा-बुआ-सरीखी सहृदय, पूज्या का विश्वास उठ गया
मुझपर से, मैं बता न पाई उनको—क्या थी बात हो रही
    उस दिन हम चारों में ! उनका अनुभव था साघात यह नया

उन्हें रहस्य बता दूँ, तो यह उल्लंघन होगा उसका, जो
    शपथ दिला दी गई हमें थी बात शुरू करने के पहले
यदि न बताऊँ, तो जीवन-भर शूल चुभेगा यह अंतर् में
    कि मैं भार हलका न सकूँगी कर अपना मरने के पहले

भार रहेगा मेरे उर पर सदा कि मुझको पकड़ लिया था
    कपट-भाव से बात छिपाते श्यामा-बुआ-सरीखी प्रेमर
महिला ने, जो प्राण निछावर करती रहीं निरंतर मुझपर ,
    मेरी इस उन्नति का कारण था जिनका प्रोत्साहन केवल

चंदन बोले—तुमको तो कुछ मिला पूर्वजों का था गौरव ;
    मैं तो रज-कण से भी लघु था, कौन उठाता मुझको ऊपर
श्यामा-बुआ न होतीं यदि तो ? जगती-तल पर मुझे धूल में
    मिला दिया जाता मतवाले चरणों द्वारा कुचल-कुचल कर

जिसका सब अस्तित्व बना था जिनकी निःस्पृह कृपा प्राप्त कर ,
    वही बन गया उनकी नज़रों में कपटी, कृतघ्न, पामर नर
इससे बढ़कर मर्मातक क्या और वेदना होगी, मेरा
    जीवन आज बन गया मरु की ज्वाला के तूफ़ानों का घर

भारतीय संस्कृति में ऐसा तत्त्व न कोई मैंने जाना,
देन दे सके श्यामादेवी से जो उन्नत महिला-मन को।
भारत-माँ की शक्ति-ज्योति के एक अंश की वह प्रतीक हैं ;
उनसे कपट ? कल्पना इसमें है मेरे दयनीय पतन की।

कैसे इस कल्पना-कलुष को दूर करूँ मैं ?—इस चिंता से
अस्थिर है मेरा मन, भीषण-दंश-वेदना-व्यथित हृदय है।
जीवन की साधना सकल है छिन्न-भिन्न-सी हुआ चाहती ;
जन-सेवा-आदर्श रखा जो आगे, उसकी क्षति का भय है।

मन्थन बहुत विचारों का है मैंने किया, परन्तु, न अब तक
ऐसे किसी मार्ग पर चलना उचित प्रतीत मुझे हो पाया,
जिसपर मैं, तुम, रघुवर चल दें और न श्यामा-बुआ साथ हों।
कैसे छोड़ चलें हम उनके आशीर्वादों की शुभ छाया ?

शपथ दिलाई हमें अतिथि ने निभृत मंत्रणा के पहले जो,
उसके कारण बता न पाए एक शब्द भी उनको, हमको
कपटी समझ, इसीपर, चल दीं बुआ ; न उनको किया संमिलित
चर्चाओं में, क्योंकि, अतिथि ने दी प्रधानता आयु-नियम को

और बताया संभव होना किंचित् भेद विचारों का भी
उनसे। सरल भाव से हमने चर्चाएँ कीं ; ज़ोर न डाला
कि वह बुआ को करे संमिलित चर्चाओं में। इसी भूल ने
किया बुआ को खिन्न, हमारा भी उनके आगे मुख काला।

नया क्रांति-पथ-तंत्र समझने में शायद कुछ भूल हो गई ;
क्षण-भर याद रही कोमलता नहीं बुआजी के अंतर की,
भोलेपन में हम तीनों के मुख पर गोपन-भाव आ गया ;
इन तीनों त्रुटियों ने, मिल, की नष्ट योजना जीवन-भर की

कोई मार्ग सोचना होगा सत्वर, जिससे आत्म-ग्लानि का
घन हो दूर, रश्मि स्वाभाविक संबंधों की फिर उद्भासित
इतने में रघुवर ने आकर कहा—हुई हमसे नादानी ;
चलकर करें कपट की शंका उनके मन से शीघ्र तिरोहित

तीनों, पश्चात्ताप-भाव ले, पहुँचे शीघ्र पास श्यामा के,
कर प्रणाम, यों किया निवेदन—स्वामीजी के शिष्य पधारे
पास हमारे ; शपथ उन्होंने हमें दिलाई—जो कुछ चर्चा
हममें हो, जीवन-भर उसके गुप्त रखें हम आशय सारे

शपथ-बद्ध थे, क्षमा-पात्र हम ; कपट अभीष्ट न रहा हमारा ।
सब-कुछ निर्मित किया आपने, जीवन में जो भीतर-बाहर
हैं हम सबके । दूर कीजिए शंका ! हम न कभी रख सकते,
जान-बूझकर, देवि, आपसे अपनी कोई बात छिपाकर

श्यामा बोलीं—दोष नहीं है तुम-जैसों का ; मैंने अपना
यदि दायित्व निभाया होता, तो स्थिति में होता परिवर्तन
यह मेरा है दोष कि अब तक मार्ग न कोई ढूँढ़ सकी मैं,
जिसपर चलकर सार्थक करते तुम अपना तेजस्वी यौवन

क्षमा न माँगो, शपथ न तोड़ो, मुझे बताओ मत रहस्य कुछ,
अपना मन छोटा न करो, तुम स्वयं देश को मार्ग बताओ
कोटि-कोटि नर-नारी-शिशु हों जिसमें सभी संमिलित, सक्रिय,
व्यापक-जन-आंदोलन-गंगा ऐसी तप्त देश में लाओ

मातृ-भूमि के बंधन तोड़ो, अब विलंब यह सहा न जाता ।
विश्व मुक्त, उन्नति के पथ पर ; अब तक बंदी भारत-माता
मेरा कोई पंथ नहीं है, मुझे बनाओ अपनी अनुचर !
जो स्वदेश के लिए प्राण दें, मेरा केवल उनसे नाता

मेरा जीवन-सुमन मिला लो, तरुणो, अपनी उस माला में,
    जिसमें मिलकर प्राण तुम्हारे आगे बढ़ें मुक्ति के रण मे
और चढ़ें सोत्साह देश की स्वतंत्रता की बलि-वेदी पर।
    बलि होकर,ऐसा क्षण लाओ,लें सब मुक्ति-श्वास जिस क्षण मे

एक ओर दे गए प्रेरणा तिलक प्रदर्शन, भाषण, लेखन,
    कारा-निर्वासन-यात्रा की, सजग, तीव्र जन-आंदोलन की
और दूसरी ओर दे रहे प्राण क्रांतिकारी, हँस-हँसकर,
    इन दोनों प्रवृत्तियों को जो व्यापक बना सके जन-जन की

ऐसे नेता के स्वागत को उत्सुक है जनता का तन, मन।
    पथ-दर्शक वह चाह रही है ऐसा, जो उसको सिखलाये
रण की ऐसी नई प्रणाली, जिसमें अवसर मिले सभी को
    बलि का, तन-मन-धन-प्राणार्पण की सबकी जो लगन बढ़ाये

आवश्यकता है यह—वह दे कोटि-कोटि जनता को वह बल,
    जिससे, बिना लिए ही शस्त्रों और साधनों का वह आश्रय
सक्रिय और सजग हो, अविरत करे कठिन संघर्ष अनय से
    और प्राप्त कर सके देश के मुक्ति-समर में, निश्चय ही, जय

हो कोई ऐसा बल यदि तुम लोगों के कल्पना-कोष में,
    मुझे बताओ; करने निकलूँ, ले उसका आधार, संगठन
घर-घर, ग्राम-ग्राम, पुर-पुर में, कर कृतज्ञ जय-घोष तुम्हारा,
    मैं साम्राज्यवाद से लड़ने को कर दूँ सबका आवाहन

चंदन, मृदुला, रघुवर उनको, स्तब्ध, मुग्ध हो, देख रहे थे,
    श्यामा का हर शब्द हृदय का मर्म गूढ़तम खोल रहा था
उनके मुख से बोल रही थी कोटि-कोटि मनुजों की आत्मा,
    बोल रही थी भारत-माता, आगामी युग बोल रहा था

उत्तर युग की प्रबल माँग का दिया शीघ्र ही गाँधीजी ने,
जनता को बल दिया अहिंसा का, हथियार प्रदान कर दिया
सत्याग्रह का ; हुआ प्राण की विद्युत् से परिपूरित भारत ;
आत्म-तेज की विमल ज्योति से राजनीति का क्षितिज भर दिया !

यह बल, यह हथियार, असल में, जनता ही में अंतर्हित थे ;
गाँधीजी ने उन्हें उभारा, जैसे शिक्षक योग्य उभारे
सत्प्रवृत्तियाँ शिशुओं की । ले आए वह, क्रमशः प्रयत्न कर,
नौका भारत की, तूफ़ानों से निकालकर, मुक्ति-किनारे ।

यह स्वाभाविक था कि अनुसरण गाँधीजी के आंदोलन का
करें, साथ भारत-जनता के, श्यामा, चंदन, मृदुला, रघुवर,
किंतु, पूर्व इसके, गहरी आ गई समस्या उनके आगे,
जब दुर्गा ने कहा एक दिन श्यामा-जीजी के घर आकर-

जीजी, मैंने अबतक अपने मन पर किया नियंत्रण भारी,
कुल-मर्यादा, परंपराएँ, जाति-प्रथाएँ छोड़ी सारी ;
अनुचित मन-मानी मृदुला की अब मैं सहन नहीं कर सकती ।
तुम्हीं उसे समझाओ, मैं तो समझा-समझाकर हूँ हारी ।

उसे दिलाई ऊँची शिक्षा सह-शिक्षा के प्रमुख केंद्र में ;
किसी उचित गति-विधि पर उसकी कभी नहीं प्रतिबंध लगाया ।
उम्र हो चली उसकी ज़्यादा, अतः, विवाह-हेतु, लड़कों को
उसे देखने हमने अपने घर जब पिछले दिनों बुलाया,

तब उसने उपहास किया उन लड़कों का, व्यवहार बुरा कर ;
पाना कठिन किया अपने हित, इस प्रकार अच्छे घर, वर का ।
अब आता है नहीं देखने उसे कहीं से कोई लड़का
सज्जन, स्वस्थ, सुशिक्षित, सुन्दर, ऊँचे कुल का, अच्छे घर का ।

एक बार जब उसे देखने आया युवक प्रतिष्ठित घर का,
देख विदेशी वेश, कह उठी मृदुला, घृणा-भाव दिखलाकर—
मेरा अविवाहित रहना ही होगा बहुत सुखद इससे तो
कि मैं नव-वधू बनकर पहुँचूँ इस विलायती बंदर के घर

उग्र गंध जब धूम्र-पान की एक युवक के मुख से आई,
मृदुला, उससे बात न करके, लेने लगी वहीं उबकाई
जब आया तीसरा, प्रसाधन-चूर्ण लगाकर अपने मुख पर,
मृदुला उसका मुँह धुलवाने अपने हाथों पानी लाई

अच्छे-भले, समृद्ध घरों के, सुंदर, स्वस्थ, सुशिक्षित लड़के
अब तब दर्जन-भर लौटाए उसने घर से, अपमानित कर
इससे निंदा हुई यहाँ तक—अब न देखने आता कोई।
नींद नहीं आती अब हमको—कहाँ मिलेगा उसे योग्य वर

माता और पिता का उसने बिलकुल तोड़ दिया अनुशासन,
आप उसे अब करें नियंत्रित ; मैं, अन्यथा, आपके घर के
आगे धरना दूँगी, करवा दूँगी बंद सभी आंदोलन,
जिनमें आप संमिलित होंगी, मृदुला को निज अनुचर करके

उसी समय आ गईं रमा भी श्यामादेवी के घर ; बोलीं—
जीजी, चांदन बात हमारी नहीं मानता, करो नियन्त्रण
उसका तुम, तैयार करो अब उसे ब्याह करने को ; घर के
आगे मैं, अन्यथा, तुम्हारे, अनशन हूँ कर रही आमरण

श्यामा ने बुलवाकर तत्क्षण मृदुला, चंदन को, उनसे यह
कहा कि—ये दोनों माताएँ अलग एक करने आंदोलन
आई हैं, जिससे रुकता है हम सबका असली आंदोलन
भारत-स्वतंत्रता का ; इनको तुम अब दो समुचित आश्वासन

ये कहती हैं कि तुम इन्हें अब मुक्त करो इसकी चिंता से
कि ये अभी तक करने पाईं नहीं अभीष्ट विवाह तुम्हारा,
यदि, विवाह कर, मुक्त करोगे नहीं इन्हें इसकी चिंता से,
धरने, अनशन से रोकेंगी ये संघर्ष तुम्हारा प्यारा,

जिसमें तुम्हें भाग लेना है, मेरे साथ, शीघ्र ; गाँधीजी
हैं आह्वान कर रहे सबका करने को स्वतंत्र भारत को।
मृदुला बोलीं—आंदोलन में भाग हमारा लेना निश्चित,
कोई शक्ति बदलवा सकती नहीं सुनिश्चित इस अभिमत को।

ये दोनों आपके सामने लगी रहें धरने, अनशन में,
आप इन्हें सांत्वना दीजिए ; हम दोनों चल देंगे, सत्वर
अविवाहित ही, गाँधीजी के आंदोलन में लगने, बाहर ;
उनका क्षेत्र बहुत व्यापक है, आंदोलित होगा भारत-भर

वास्तव में स्थिति यह है—भारत में नारी स्वाधीन नहीं है,
क्रय-विक्रय की वस्तु बना दी गई विवाह-पण्य-शाला में
धर्म, जाति, कुल, धन, गौरव की वध-शालाएँ खुली हुई हैं,
जिनपर बलि होती है उसकी ; विष है परिणय की हाला में

युग-युग से भारत की नारी कालकूट यह पीती आती ;
मैं न सहूँगी यह उत्पीड़न ; मैं इससे विद्रोह करूँगी
आत्म-समर्पण नहीं करूँगी मैं विवाह की वध-शाला को ;
या तो तोड़ूँगी सब बंधन, या मैं अविवाहिता मरूँगी

या तो अपने मन के वर को उर की वरमाला पहनाऊँ
या मैं एकाकी झर जाऊँ विजन-सुमन-सी जीवन-वन में
यह निश्चय कर चुकी सुदृढ़ मैं ; मुझे न इससे कर सकती है
विचलित कोई शक्ति विश्व की ; लक्ष्य-मूर्ति ध्रुव मेरे मन में

तन का , मन का, रुचि, आत्मा का,नहीं हृदय का साम्य परस्पर,
फिर भी, बाँध दिए जाते हैं आपस में विभिन्न नारी-नर
यह अंधेर सहस्रों वर्षों से विवाह का चला आ रहा ,
अविवाहित रह, क्यों न नारियाँ इसे चुनौती दें, जीवन भर

बात क्रांति की, आंदोलन की, भारत की स्वतंत्र सत्ता की
करने लगे भले ही हों कुछ भारत के प्रबुद्ध अधिवासी
पर, उनका यह यत्न अधूरा, जब तक प्रेम और परिणय के
बारे में न बद्ध नारी के उर की होती दूर उदासी

बंधनहीन-वरण-आकांक्षा के वे भी हैं शत्रु भयंकर,
जो युवतियाँ-युवक उच्छृंखल, खेल समझकर इसे, असयम
दिखलाते हैं प्रेम-क्षेत्र में, नहीं समझते—कितना निर्मल,
त्याग-पूर्ण , दायित्व-पूर्ण है यह अनन्य-विश्वास-उपक्रम

उनको भी उत्तर देना है सक्रिय मुझको ; इसीलिए, है
निर्विवाद-निष्कलुष रखा अब तक मैंने निज निर्मल अंचल
मैं ललकार सभीको सकती जीवन के इस गहन क्षेत्र में
इसी शक्ति से ; यही क्रांति के पथ पर मेरा अक्षय संबल

दुर्गा बोलीं—बेटी, तुझको किसने रोका कि तू न अपनी
रुचि का वर कर प्राप्त ; हमारा तो आग्रह है इतना केवल—
तू कर ले विवाह, अब ; हमको कर निश्चित,न अधिक उम्र तक
अविवाहित, एकाकी रह इस जग में, जिसमें व्याप्त कपट-छल

मृदुला बोलीं—माँ, यदि तुममें साहस हो, तो, करो मान्य यह—
मेरा निश्चय है कि करूँगी मैं विवाह अपना चांदन से
यदि यह संभव नहीं हुआ, तो, मैं, अविवाहित ही, निज जीवन
जन-सेवा में लगा, रहूँगी आजीवन निर्मल तन-मन से

प्रेम विवशता है अन्तर् की ; यदि वह होता है, तो, उर में
तो रहता ही है, पर, वाणी और कर्म में उसे अवतरित
करना शिक्षित और सुसंस्कृत मानव–हृदय स्थगित कर सकता
है कुछ कालावधि को, करके आत्म-त्याग, रह आत्म-नियंत्रित ।

बोलो, मृदुला, कर सकती हो इतना त्याग गुरुजनों के हित,
जिससे स्वतंत्रता–आंदोलन में वे लगें, अचिंतित होकर ?
साश्रु-नयन, अवरुद्ध-कंठ हो, मृदुला बोलीं—वही करूँगी
मैं, जो तुम चाहोगे मुझसे ! प्रस्तुत हूँ मैं बलि-वेदी पर !

५

भारत की जनता की आत्मा, हृदय और तन-मन थे जिसके
हेतु तड़पते, उस स्वतंत्रता की इच्छा को किया प्रदान
मूर्त रूप वचनों, कर्मों में जिन गाँधीजी ने, भारत में
आकर, उनका राजनीति में क्रमशः हुआ उच्चतम स्थान।

किया परीक्षण सफल दक्षिणी अफ्रीका में, राजनीति में.
गाँधीजी ने सत्य, अहिंसा, भद्र अवज्ञा का, बलिदान
और त्याग का, जिससे उनकी ओर अखिल जगती के चिंतक
क्षेत्रों का खिंच गया अचानक, स्नेहादरविस्मययुत, ध्यान।

असहयोग का, बहिष्कार का दिया मंत्र जब गाँधीजी ने,
भारत के घर-घर में गूँजा उनका वह स्वर, वह आह्वान;
कोटि-कोटि जनता ने निश्चय घोषित किया—करेगा कोई
नहीं विदेशी, शोषक शासन को अब निज सहयोग-प्रदान।

श्यामा की आत्मा ने, मानो, अंधकार में भ्रांत पथिक को
ज्योति-रश्मि की भाँति, किया इस आंदोलन को प्राप्त निदान।
गाँधीजी में मिला उन्हें निज जीवन-पथ का वह निर्देशक,
जिसके कारण हुआ तीव्रतर चरम सत्य का अनुसंधान।

"अब पाया, अब पाया !" की ध्वनि से मुखरित हो उठी अंततः
उनकी अन्वेषक आत्मा, पा गाँधीजी का शुभ संकेत ;
वृद्धावस्था और स्वास्थ्य की दुर्बलता की चिंता को वह
छोड़, हुई इस आंदोलन में तन्मय, चंदन आदि समेत ।

श्यामा के प्राणों में ऐसी विद्युत् भर दी गाँधीजी के
आवाहन ने, जिससे घर-घर, गाँव-गाँव जा-जा, अक्लांत,
नर-नारी-शिशु सबको करने लगीं अहर्निश प्रोत्साहित वह—
छोड़ो सब संबंध विदेशी शासन से ; अब रहो न भ्रांत !

भारत-माता नहीं भूमि वह केवल, जिसका मुकुट हिमाचल,
सिंधु कराता जिसके चरणों को है अपने जल से स्नान,
जिसमें पर्वत, दुर्ग, भवन हैं, खेत, कूप, अमराई, खानें,
जिसमें चित्र-गुफाएँ, मंदिर, सर, सरिताएँ, तीर्थस्थान ;

भारत-माता है वह जनता, कोटि-कोटि वे शिशु-नारी-नर,
जो इस भू के वासी, इसपर करते हैं जो श्रम अविराम ;
उन सबकी है मुक्ति बंधनों का खंडन भारत-माता के,
उनका सुख भारत-माता का सुख, उसकी सेवा अभिराम ।

आत्मा पर जनता की छाया जो कल्मष दासत्व-व्यथा का,
उसे मिटाकर, सुख स्वराज्य का उसे कराना है यदि प्राप्त,
तो, सब, अन्यायी शासन से असहयोग का निश्चय करके,
बहिष्कार से दूर हटाओ, शासन की जो माया व्याप्त ।

श्यामा का आह्वान त्याग की ज्योति जगाता जन-मानस में,
जिससे प्रेरित, असहयोग का निश्चय करते व्यक्ति अनेक ;
शासकीय विद्यालय से हर वीर छात्र आता था बाहर,
न्यायालय का त्याग साहसी करता अभिभाषक प्रत्येक ।

जीर्ण वस्त्र-सी थे उपाधियाँ सहृदय लौटाते शासन को,
शासकीय सेवाओं से हो पृथक्, वीर पाते आनंद
कुछ विधान-मंडल-से थे जो मृग-मरीचिका-मात्र, छोड़कर
उन्हें, समझते अपनेको कुछ सज्जन तुष्ट और स्वच्छंद

कतिपय वज्र-मद्यपों ने भी छोड़ा मदिरा-पान, कर दिया
बहुतों ने विदेश में निर्मित वस्त्रों का वर्जित परिधान
जो विधान थे दमन-पूर्ण, उन सबकी करना भद्र अवज्ञा
लगे चाहने शूर, जिन्हें था शासन के पीड़न का भान

केवल ध्वंस नहीं, नव-रचना का भी था उनका आयोजन,
विद्यालय राष्ट्रीय खोलने लगे साहसी चारों ओर
कर स्वतंत्र-पंचायत-स्थापन न्याय-दान की नई व्यवस्था
करने लगे, छिन्न हो जिससे 'दुष्ट न्याय' का पाश कठोर

थे रचनात्मक कार्य और भी, जिनमें देश-भक्त नर-नारी,
गाँधीजी से प्रेरित, अपना करने लगे सतत श्रम-दान
वे थे सूत कातना, खादी बुनना, धारण, ऐक्य देश के
धर्मों और संप्रदायों में, दलित-वर्ग का अभ्युत्थान

महाज्योति थे गाँधीजी, वह मूल प्रेरणा आंदोलन की,
थीं निज कार्य-क्षेत्र में श्यामा उसकी दृढ़ नेत्री, अविराम
चंदन, मृदुला, रघुवर, माधव आदि अथक अनुचर श्यामा के,
अनासक्त निष्ठा थी जिनकी, जिनका कर्मयोग निष्काम

रहमतअली मित्र रघुवर के थे घनिष्ठ, वह भी श्यामा के
स्वार्थ-त्याग, बलिदान-भाव से हुए प्रभावित, पाया स्थान
शीघ्र उन्होंने उस अंचल के उस आंदोलन में आदर का,
संघर्षों की गति में उनका योग-दान लाया तूफान

मृदुला के सह-छात्र पुराने थे सुनील, जो प्राध्यापक थे
शासकीय शिक्षा-संस्था में ; किया उन्होंने निज पद-त्याग
पा उनका सहयोग कृष्णपुर-हरिपुर-अंचल के क्षेत्रों मे
और अधिक हो उठी प्रज्वलित वह जन-आंदोलन की आग

इन सब कर्मठ नेताओं ने, मिलकर, कर दिन-रात परिश्रम,
स्वयंसेवकों के संगठनों का भी किया सुदृढ़ निर्माण
चिनगारियाँ उन्होंने घर-घर, ग्राम-ग्राम जन-आंदोलन की
पहुँचा दीं, जिनसे उद्‌बोधित हुए उक्त अंचल के प्राण

जब होलियाँ विदेशी वस्त्रों की जलतीं, शिशु हर्षित होते,
नभ की सीमा, मानो, छूने लगता तब उनका आनंद
शासकीय शिक्षा-संस्थाओं का जब बहिष्कार होता था,
हर्षोत्फुल्ल किशोरों के मन तब होने लगते स्वच्छंद

युग-युग से जो असंतोष था संचित जनता के मानस मे,
जलियाँवाला के डायर के सह न सका था अत्याचार
शस्त्रहीन जनता पर उसने जो गोलियाँ चलाईं, उनसे
भड़क उठी विद्रोह-भावना, गूँजा उर में हाहाकार

श्यामा के विद्रोही अंतर् ने आघात सहे बहुसंख्यक,
पर, इन अत्याचारों से अति-आहत उर का मर्मस्थान
वह विक्षुब्ध न ढूँढ़ सकी थीं जब प्रतिकार-मार्ग कोई भी,
गाँधीजी के आंदोलन में उन्हें मिला जनता का त्राण

पृष्ठ-भूमि यह लेकर श्यामा कूद पड़ी थीं आंदोलन के
समरांगण में ; सत्य, अहिंसा, साहस उनके थे हथियार
भग्न स्वास्थ्य ले, वृद्ध, क्षीण तन, छोड़ शयन, भोजन की चिंता,
जुटीं अहर्निश क्रांति-संगठन में ; उनका उत्साह अपार

जहाँ पहुँच जातीं, नर-नारी-शिशु, उनका संपर्क प्राप्त कर,
किया चाहते आंदोलन में कार्य, त्याग, साहस, बलिदान
उनका भाषण सुनकर, जनता मंत्रमुग्ध-सी हो जाती थी,
एक नई आभा से होते उद्‌भासित उसके मन-प्राण

कथित 'राज-भक्तों' के साधन, पहले, आंदोलन में बाधा
पहुँचाने को, शासन-द्वारा किए गए साग्रह तैयार
पर, वे विफल हो गए वैसे, जैसे बालू बह जाती है,
असफल हो प्रतिरोध-यत्न में, सागर में आने पर ज्वार

सूने शासकीय विद्यालय, न्यायालय, कार्यालय भी जब
होते देने लगे दिखाई, तब शासन हो उठा अधीर
और चलाने लगा, वेग से, दमन-रूप में, हृदय-हीन वह
देशभक्त जनता, नेताओं पर अपने तरकश के तीर

दमन तीव्र-गति हुआ देखकर, श्यामा के मन में यह आया
भाव कि वह है गाँधी के उस आंदोलन की सैनिक एक
जिसने नव इतिहास बनाया, नई शक्ति दी निःशस्त्रों को,
हिला दिया साम्राज्यवाद को, चमत्कार कर दिए अनेक

ले यह भाव आत्म-गौरव का मन में, कष्ट-सहन श्यामा ने
पहुँचा दिया चरम सीमा तक अपना ; किया सहन-प्रतिकार
दमन-चक्र का ; धैर्य, अहिंसा, साहस का संबल अपनाया,
स्वतन्त्रता की बलि-वेदी पर चढ़ने को होकर तैयार

देख उन्हें अस्वस्थ, सभीने कहा—लीजिए आप कुछ समय,
श्यामाजी, विश्राम ; नहीं चल पाएगा अब रुग्ण शरीर
पर, वह विरत न हुआ चाहती थीं क्षण-भर भी आंदोलन से,
क्योंकि, क्षेत्र में उनके स्थिति थी आंदोलन की अति-गंभीर

किंतु, अंततः, आ पहुँचा वह क्षण, जब श्यामा की गति-विधियाँ
क्रांति-संगठन की शासन को हुईं असह्य; कठोर प्रहार
उसने उनपर किया; सुनाया गया दंड उनको कारा का।
कहा उन्होंने—अब उतरेगा मातृ-भूमि का कुछ ऋण-भार

उनके बाद, सभी अनुगामी उनके बंदी हुए विदेशी
शासन के कारा-गृह के, थे जिनमें चंदन और सुनील
मृदुला, रघुवर, रहमत आदिक; फिर भी, आंदोलन की गति में,
जनता के उत्साह, संगठन, साहस से, आ सकी न ढील

पर, यह पहला क्रम सामूहिक क्रांति, अहिंसक आंदोलन का;
कालांतर में, स्वाभाविक ही, इसमें आने लगा उतार
विजय आंतरिक होती इसमें, ऊपर असफल भले दिखाई
पड़े नया यह आंदोलन; है इसका अद्भुत तंत्र, विचार

पा न सके इसके पहले क्रम में स्वराज्य, पर, भारत-वासी
इसके कारण बने अभय; घर-घर में इसका हुआ प्रचार
जड़ साम्राज्यवाद की ढीली हुई; हृदय बदला भारत का;
चकित हुआ अभिनव क्षमता पर इस आंदोलन की संसार

श्यामा को कारागृह में यह सुन-सुनकर संतोष हुआ था
कि किया जनता ने उस अंचल की आंदोलन में बलिदान
अच्छी संख्या में नर-नारी कारा-वासी बने; सहे वे
कष्ट उन्होंने साहस-पूर्वक, जिससे बढ़ा क्षेत्र का मान

किंतु, रुग्ण, वृद्धा श्यामा की काया क्षीण हो गई अतिशय;
लंबा कारा-वास मरण के उनके क्षण ले आया पास
जब वह, कारा-अवधि काटकर, सब के साथ छूटकर आईं,
मरणासन्न देखकर उनको, जनता का मन हुआ उदास

पर, वह बोलीं—मत उदास हो, मुझे देखकर ; मन प्रसन्न है ;
केवल इतना खेद मुझे है कि तन हुआ अत्यंत अशक्त
आदोलन के पहले क्रम में मुक्त नहीं हो पाई जनता ;
दे पाऊँगी मैं न दूसरे क्रम में स्वेद और निज रक्त

जनता ने रोमांचित होकर, इसपर सुना कि बोले चंदन,
मृदुला, रहमत, रघुवर आदिक—आप न चिंतित हों अणु-मात्र
हम सब देंगे स्वेद, रक्त निज, जब द्वितीय क्रम आंदोलन का
माँगेगा ; बलि-अर्घ्यों से हम पूर्ण करेंगे उसका पात्र

दिन पर दिन थीं श्यामा होती जाती क्षीण । एक दिन बैठे
चंदन, मृदुला, मोहन, माधव, दुर्गा, रमा आदि जब पास
श्यामा बोलीं—कारा में रह, तप-प्रकाश से हुए विमलतर
ये, अनुमति दे चंदन-मृदुला को, अब, दो विवाह-उल्लास

चदन ने, संकुचित-भाव से, इसपर, कहा—बुआजी, कैसी
इस अवसर पर छेड़ रही हैं आप असंगत-सी यह बात
होना है नीरोग आपको पहले और स्वतंत्र देश को,
उसके बाद···। हुआ मृदुला का मुख आरक्त, विनत,अवदात

किंतु, न श्यामा स्वस्थ हो सकीं और न देख सकीं भारत को
वह स्वतंत्र ; हो गया अचानक एक दिवस उनका देहांत
वज्राघात-समान सूचना पा इसकी, बहुसंख्यक जनता
सत्वर पहुँची वहाँ, जहाँ थी उनकी कुटी, शांत, एकांत

साश्रुनयन, अवरुद्धकंठ, नर-नारी-शिशु हो उठे विकल सब,
जब उनका शव अंतिम यात्रा को निकला ; थे उसके सा-
मनुज सहस्रों, शिथिलचरण, चल रहे ; सोचते थे उनके मन—
क्रांतिकारिणी चलीं, हुए हम, मानो, अब असहाय, अनाथ

शोक-सभा में चंदन, मृदुला ने देखा समूह जनता का
इतना बड़ा, व्यथाकुल इतना कि वे हुए विस्मित । अभिमान
उन्हें हुआ । भाषण में चंदन, श्रद्धांजलि अर्पित कर, बोले—
स्वतंत्रता की बलि-वेदी पर उनका हुआ महत् बलिदान

अथक, अधूमिल, दीप-शिखा-सी, तिल-तिल कर, वह जलीं ; रहीं अ
देती जीवन-भर जनता को त्याग-भाव का विमल प्रकाश
घोर परिश्रम जन-आंदोलन का संगठन बनाने में वह
करती रहीं ; कष्ट कारा के लाए निकट देह का नाश

मृदुला बोलीं—क्रांतिकारिता की विद्युत् से निर्मित लगते
चिंतन के हर क्षण में उनके थे जीवन, तन, मन, उर, प्राण
अंत-समय तक किया उन्होंने अविरत, दृढ़ संघर्ष अनय से ;
अंतिम क्षण में भी था उनके मुख पर अभय-हास अम्लान

रहमत बोले—संप्रदाय या जाति, धर्म के भेद-भाव ने
छुआ न कभी एक क्षण को भी उनकी आत्मा को ; वह वीर
क्रांतिकारिणी महिला जूझीं ऐसे वैमनस्य के विष से
जीवन-भर ; निज अथक, अहिंसक रण में हुईं न कभी अधीर

रघुवर रुद्ध कंठ से बोले—उनसे बढ़कर दलित-जनों का
त्राता कोई मिला न हमको ; दिया उन्होंने हमको साथ
जीवन-भर ; दलितों के हित में किए अमित बलिदान उन्होंने ;
कष्ट उठाया, त्याग किए ; वह चली गईं कर हमें अनाथ

जब सुनील ने अपने भाषण में स्मारक का प्रश्न उठाया,
जनता दबा सकी न हृदय में निज कृतज्ञ स्वीकृति का भाव
श्यामाजी के जय-निनाद से गुँजा दिया जनता ने अंबर,
बता दिया—किस ओर लोक-अभि-रुचि-सरिता का मुड़ा बहाव

रखी रूप-रेखा सुनील ने स्मारक की यों—भारत जब तक
पराधीन है, ईंट-पत्थरों के जड़ स्मारक हैं बेकार
श्यामाजी का जीवित-जाग्रत स्मारक हो ऐसा तेजस्वी,
जिससे उनके आदर्शों का कार्य-रूप में बढ़े प्रचार

करें महाविद्यालय स्थापित हरिपुर में हम उनकी स्मृति में,
जो राष्ट्रीय और तेजस्वी हो, जिसमें हो उन्नत स्थान
ज्ञान, शील, तप, कर्म, त्याग का, जिसके छात्र और छात्राएँ
करें देश की स्वतंत्रता की बलि-वेदी पर निज बलिदान

उससे अच्छा स्मारक क्या हो सकता है श्यामादेवी का ?
उसमें उनके आदर्शों को मूर्त-रूप दें छात्रा-छात्र
अध्यापक, आचार्य, सभी, हो जिससे पूरा कार्य अधूरा
उनका, वे सब सिद्ध हो सकें जनता के आदर के पात्र

छोड़ें मोह बृहद् भवनों का, वे कुटियों में कार्य चलावें ;
जनता जो कुछ दे श्रद्धा से, उससे करें तोष, निर्वाह
संस्था का व्यय अल्प, कार्य हो महत् ; न्यूनतम वेतन लेकर
उसकी सेवा करें योग्यतम, त्यागी अध्यापक सोत्साह

पूछा जनता से सुनील ने—क्या जनता, व्यय-भार उठा, यह
उनका स्मारक बना सकेगी ? उसने किया इसे स्वीकार
तुमुल जयध्वनि से। निर्वेतन अध्यापन को कुछ विद्वज्जन
उद्यत हुए ; सराहा सबने उनका वह निस्वार्थ विचार।

थोड़े समय बाद, हरिपुर में ग्राम-महाविद्यालय पहला
भारत का हो गया कार्य-रत, देने लगा उच्चतम ज्ञान
जन-भाषा-माध्यम से ; उसमें होने लगे छात्र-छात्राएँ
दीक्षित देश-भक्ति में, जिसका स्वाभाविक फल था बलिदान।

महिलाओं ने दिया महात्मा गाँधी को इस बार अकल्पित,
क्रियाशील सहयोग ; देश-भर में उनका अदम्य उत्साह
सजग हो उठा ; साहस-विद्युत्, प्राण-ज्योति से पूर्ण कर दिया
वातावरण देश का उसने, प्रखर क्रांति का किया प्रवाह ।

मदिरा और विदेशी वस्त्रों की दूकानों पर दे धरना,
कठिन कर दिया विक्रय उनका ; किया उन्होंने ऐसा कार्य,
जिससे विस्मित हुई विदेशी सत्ता, आतंकित अन्यायी,
हत-प्रभ दमन,जागरण निश्चित,हुआ क्रांति-स्वागत अनिवार्य ।

सत्याग्रह के साथ देश ने कर-बंदी का आंदोलन भी
छेड़ा ; तोड़ा क़ानूनों को ; शासन-चक्र किया निःशक्त ;
घर-घर नमक अवैध बन उठा ; जनता ने साम्राज्यवाद को,
सत्य, अहिंसा से, ललकारा ; दिया क्रांति को अपना रक्त ।

यह द्वितीय क्रम आंदोलन का पहले क्रम से अधिक उग्र था ।
किया बीच के वर्षों में था कार्य बहुत, निशिदिन, अश्रांत,
हरिपुर और कृष्णपुर क्षेत्रों के उन नेताओं ने, जिनको
प्राप्त हुई प्रेरणा निरंतर श्यामा से, जिनका देहांत

और सुदृढ़ कर गया क्रांति का उनका निश्चय ; फल लाया अब
उनका पिछला श्रम ; उस अंचल की जनता ने सुन आह्वान
गाँधीजी का, आंदोलन में निज सर्वस्व लगाया ; नेता
मिले उन्हें परिचित,जिनपर थी आस्था उन्हें और अभिमान ।

सबको जाना-माना था उस अंचल की जनता ने वर्षों,
सबकी परखी क्रांतिकारिता, साहस, धैर्य, वीरता, शील,
नेता वही प्राप्त उसको इस आंदोलन में भी, जिनमें थे
चंदन, मृदुला, रघुवर, रहमत, माधव, मोहन, रमा, सुनील ।

गत आंदोलन में भी ये सब, एक-एक कर, कारा-वासी
हुए ; दूसरे आंदोलन में भी निखरा इन सबका तेज ;
इन सबके साहस से, श्रम से उस अंचल में आंदोलन ने
ऐसा धारण किया रूप, रह गए स्तब्ध जिससे अँगरेज ।

किंतु, शीघ्र ही दमन-चक्र कर दिया तीव्रतर फिर शासन ने ;
कारागृह भर दिए हज़ारों सत्याग्रहियों से ; दिन-रात
अत्याचार किए दारुणतम ; बलवाईं लाठियाँ, गोलियाँ,
भारत-माता के अंतस्तल तक पहुँचे जिनके आघात ।

क्रमशः चंदन आदिक नेता कारा-वासी बने सभी उस
अंचल के; केवल मृदुला को नहीं मिल सका कारा-वास
कई दिनों तक । मृदुला ने तब सोचा—कोई कार्य करूँ मैं
ऐसा, जिससे आंदोलन को मिले क्रांति का नया प्रकाश ।

मृदुला ने संगठन हाथ में महिलाओं का लिया वेग से ;
उसे बनाया अधिक शक्ति-प्रद, व्यापक, निष्ठा का संस्थान ,
उसके द्वारा क्रांति-ज्योति को अद्भुत गौरव दिया उन्होंने ;
घर-घर, ग्राम-ग्राम, पुर-पुर में फहराया विद्रोह-निशान ,

इस प्रकार जन-आंदोलन का सबल, अहिंसक रूप निखारा ।
उनके धरनों की दृढ़ता से बहिष्कार का बढ़ा प्रभाव
कर-बंदी-प्रेरणा बनीं वे । अंधाधुंध लाठियाँ बरसा,
लगा रोकने शासन उनसे जन-सरिता का तीव्र बहाव

अनुचित अध्यादेश तोड़ती थी जनता प्रतिबंध निरोधक ।
एक दिवस जनता का निकला इसके लिए जुलूस विशाल
मृदुला थीं नेतृत्व कर रहीं । उसपर भीषण चलीं लाठियाँ
अंधाधुंध । हुई मृदुला की मृत्यु प्रहारों में तत्काल

दूर-दूर से आकर, त्यागी विद्वानों ने सेवा सौंपी
अपनी उसे ; समय मिलने पर उसमें आने लगे उदा
जन-आंदोलन-नेता भी निज विषयों पर भाषण देने को ;
लगे फैलने भारत-भर में उस संस्था से विमल विचार

क्रमशः बना महाविद्यालय क्रांति-केंद्र वह ; उसपर ताला
शासन का पड़ जाता, ज्यों ही आंदोलन का बढ़ता ज़ोर
श्यामादेवी के स्मारक पर, जो जीवन-भर क्रांतिकारिणी
रहीं, बन गया यह स्वाभाविक—हो शासन की दृष्टि कठोर

छोटे-मोटे आंदोलन जब शिथिल पड़े, तब लगे सोचने
चंदन, मृदुला—देखें, कब तक मिलता है अगला संकेत
कब गांधीजी के इंगित पर भारत, महाक्रांति-ज्वाला में
तप, कुंदन होने को बढ़ता है, आस्था—उत्साह-समेत

इसी बीच, दुर्गा, माधव ने आग्रह किया रमा, मोहन से
कि वे, समझकर उनकी स्वीकृति, दें चंदन को यह आदेश
कि वह शीघ्र ही मृदुला से अब हो विवाह करने को उद्यत ;
अंध-रूढ़ियाँ जड़ समाज की और अधिक दें उन्हें न क्लेश

चारों मिलकर, दुर्गा, माधव, रमा और मोहन, फिर, आए
चंदन, मृदुला के समीप ; दे उनको निज वात्सल्य-प्रसाद
बोले—हम सब सहमत है, अब तुम दोनों विवाह आपस में
शीघ्र करो, मिट जायँ हमारे जिससे चिंता और विषाद

इसपर, बोले चंदन, मृदुला—था विश्वास कि हम पाएँगे,
तप, संयम के मधुर फलों-से, कभी आपके आशीर्वाद
आप सभी सहमत हैं, इससे बढ़कर क्या उपलब्धि हमारी
हो सकती है ? पर, हम दोनों के उर का आहत आह्लाद

इससे है कि हमारी नेत्री श्यामाजी बलि हुईं क्रांति की
  और हमारी भारत-माता है दासत्व-पाश में बद्ध
ऐसे कुसमय में, विवाह कर, हम सुख का जीवन अपना लें
  या अंतिम प्रहार करने को हों इस शासन पर सन्नद्ध

शील, धैर्य, संयम से अपने जीता हृदय आपका हमने,
  एक विजय हम और प्राप्त कर लें, करके अंतिम संग्राम
साहस, कष्ट-सहन, सत्याग्रह से परास्त कर दें शासन को,
  फिर विवाह भी शीघ्र करेंगे और आपको समुद प्रणाम

हुए निरुत्तर चारों उनके आशावाद, शील, संयम से
  और चकित भी हुए कांति के साहस से उनके ; प्रस्थान
किया उन्होंने निज-निज गृह को। चंदन, मृदुला के हृदयों मे
  मंथन होता रहा कुछ समय ; फिर, प्रकृतिस्थ हुए मन-प्राण

कुछ वर्षों के बाद, महात्मा गाँधी का आदेश प्राप्त कर,
  मुक्ति-प्राप्ति के हेतु देश की जनता करने को बलिदान
पुनः हुई सन्नद्ध ; कर दिया उसने अपना निश्चय घोषित—
  पूर्ण स्वतंत्र राष्ट्र बनकर वह प्राप्त करेगी निज संमान

नहीं विदेशी शासन को, कर शोषण, जनता की आत्मा का
  पतन कराने का अवसर अब दिया जा सकेगा ; इस बार
उसे समाप्त करेगी जनता सत्याग्रह से, कर-बंदी से,
  सविनय, शांत अवज्ञा से, सब ओरों से कर प्रबल प्रहार

है जितने शस्त्रास्त्र अहिंसा के सक्रिय भांडारों में, उन
  सबका वे उपयोग करेंगे लक्ष-लक्ष, मृत्युंजय वीर
जो गाँधीजी के इंगित पर जीवन-अर्पण को निकलेंगे
  स्वतंत्रता की बलिवेदी पर ; होंगे रण में नहीं अधीर

महिलाओं ने दिया महात्मा गाँधी को इस बार अकल्पित,
क्रियाशील सहयोग ; देश-भर में उनका अदम्य उत्साह
सजग हो उठा ; साहस-विद्युत्, प्राण-ज्योति से पूर्ण कर दिया
वातावरण देश का उसने, प्रखर क्रांति का किया प्रवाह ।

मदिरा और विदेशी वस्त्रों की दूकानों पर दे धरना,
कठिन कर दिया विक्रय उनका ; किया उन्होंने ऐसा कार्य,
जिससे विस्मित हुई विदेशी सत्ता, आतंकित अन्यायी,
हत-प्रभ दमन, जागरण निश्चित, हुआ क्रांति-स्वागत अनिवार्य ।

सत्याग्रह के साथ देश ने कर-बंदी का आंदोलन भी
छेड़ा ; तोड़ा क़ानूनों को ; शासन-चक्र किया निःशक्त ;
घर-घर नमक अवैध बन उठा ; जनता ने साम्राज्यवाद को,
सत्य, अहिंसा से, ललकारा ; दिया क्रांति को अपना रक्त ।

यह द्वितीय क्रम आंदोलन का पहले क्रम से अधिक उग्र था ।
किया बीच के वर्षों में था कार्य बहुत, निशिदिन, अश्रांत,
हरिपुर और कृष्णपुर क्षेत्रों के उन नेताओं ने, जिनको
प्राप्त हुई प्रेरणा निरंतर श्यामा से, जिनका देहांत

और सुदृढ़ कर गया क्रांति का उनका निश्चय ; फल लाया अब
उनका पिछला श्रम ; उस अंचल की जनता ने सुन आह्वान
गांधीजी का, आंदोलन में निज सर्वस्व लगाया ; नेता
मिले उन्हें परिचित, जिनपर थी आस्था उन्हें और अभिमान ।

सबको जाना-माना था उस अंचल की जनता ने वर्षों,
सबकी परखी क्रांतिकारिता, साहस, धैर्य, वीरता, शील ;
नेता वही प्राप्त उसको इस आंदोलन में भी, जिनमें थे
चंदन, मृदुला, रघुवर, रहमत, माधव, मोहन, रमा, सुनील ।

गत आंदोलन में भी ये सब, एक-एक कर, कारा-वासी
हुए ; दूसरे आंदोलन में भी निखरा इन सबका तेज
इन सबके साहस से, श्रम से उस अंचल में आंदोलन ने
ऐसा धारण किया रूप, रह गए स्तब्ध जिससे अँगरेज

किंतु, शीघ्र ही दमन-चक्र कर दिया तीव्रतर फिर शासन ने ;
कारागृह भर दिए हजारों सत्याग्रहियों से ; दिन-रात
अत्याचार किए दारुणतम ; चलवाईं लाठियाँ, गोलियाँ,
भारत-माता के अंतस्तल तक पहुँचे जिनके आघात

क्रमश: चंदन आदिक नेता कारा-वासी बने सभी उस
अंचल के; केवल मृदुला को नहीं मिल सका कारा-वास
कई दिनों तक। मृदुला ने तब सोचा—कोई कार्य करूँ मैं
ऐसा, जिससे आंदोलन को मिले क्रांति का नया प्रकाश

मृदुला ने संगठन हाथ में महिलाओं का लिया वेग से ;
उसे बनाया अधिक शक्ति-प्रद, व्यापक, निष्ठा का संस्थान
उसके द्वारा क्रांति-ज्योति को अद्भुत गौरव दिया उन्होंने ;
घर-घर, ग्राम-ग्राम, पुर-पुर में फहराया विद्रोह-निशान

इस प्रकार जन-आंदोलन का सबल, अहिंसक रूप निखारा ।
उनके धरनों की दृढ़ता से बहिष्कार का बढ़ा प्रभाव
कर-बंदी-प्रेरणा बनीं वे । अंधाधुंध लाठियाँ बरसा,
लगा रोकने शासन उनसे जन-सरिता का तीव्र बहाव

अनुचित अध्यादेश तोड़ती थी जनता प्रतिबंध निरोधक ।
एक दिवस जनता का निकला इसके लिए जुलूस विशाल
मृदुला थीं नेतृत्व कर रहीं । उसपर भीषण चलीं लाठियाँ
अंधाधुंध । हुई मृदुला की मृत्यु प्रहारों में तत्काल

सबसे प्यारी बेटी वह उस अंचल में भारत-माता की,
विद्युल्लतिका-सी तेजस्वी, जुही-कली-सी थी अवदात
रजत-निर्झरी-सी निर्मल थी, अंबर-सागर-सी गभीर थी;
छीन ले गया उसे अचानक क्रूर दमन का वज्राघात

इस प्रहार के फल से शासन स्तब्ध रह गया; प्रतिबंधों को
तोड़ अधिक दृढ़ता से जनता ने निज व्यक्त किया विक्षोभ
उमड़ी मृदुला की शव-यात्रा में सारे अंचल की जनता;
उनकी बलि ने लाख-गुनी कीं उनकी सेवाएँ निर्लोभ

चंदन ने जब सुनी ख़बर यह कारा-गृह में, शून्य हो गए
उनके तन-मन-प्राण; हृदय हो गया व्यथाहत; बारंबार
भर-भर आने लगे नयन, हो, मानो, दृढ़ नगपति प्राणों का,
अश्रु-निर्झरों में, विदीर्ण हो, बहता, सह वेदना अपार!

मातृ-भूमि की स्वतंत्रता की बलि-वेदी पर चढ़कर मृदुला
अमर हुई; उनको न मिला वह अभी उच्च गौरव का स्थान!
अंतस्तल की मर्म-व्यथा यह व्यक्त नहीं कर सकते चंदन—
हुआ प्रेम का उनके वेदी पर कर्तव्यों की बलिदान!

श्यामा के वियोग से उनकी आत्मा पर आघात हुआ था;
विरह-वेदना मृदुला की कर रही हृदय को चकनाचूर!
कारा-गृह की कठिन यातना सहचर-अनुचर सहन कर रहे!
वह जीवित है, धिक्, भारत की है स्वतंत्रता अब भी दूर!

मनोवेदना में चंदन के क्षण ऐसे दुःसह कटते थे।
कर-बंदी-आंदोलन में थी जनता करती निज बलिदान।
शासन का उन्माद घोर था डटा हुआ अत्याचारों पर।
क्षत-विक्षत था हुआ जा रहा भारत-उर का मर्मस्थान!

हुआ, अंततः, शिथिल दूसरा क्रम भी उस जन-आंदोलन का ;
दमन-चक्र साम्राज्यवाद का भी हो गया एक दिन श्रांत
मुक्त हुए नर-नारी सारे, जो अब तक थे कारा-गृह में ;
जिनके स्वजन शहीद हो गए, उनके अंतर् थे उद्‌भ्रांत।

चंदन जब छूटे कारा से, भग्न हृदय प्रेमी का लेकर,
उनके स्वागत के आयोजन में जनता के उर का स्नेह
उमड़ पड़ा ; सांत्वना उन्होंने उससे पाई। बोले—भारत
होगा मुक्त एक दिन, इसमें नहीं किसीको अब संदेह

कुछ वर्षों के बाद घोषणा से गूँजे फिर धरणी-अंबर ;
कहा महात्मा गाँधी ने—अब करो या मरो, अंतिम बार
भारत-वासी नर-नारी-शिशु, छेड़ो सत्याग्रह ! अँगरेजो,
भारत छोड़ो ! सुनो अहिंसा की यह निर्णायक ललकार

पर, संघर्ष अहिंसक छिड़ने के पहले ही, गाँधीजी को
पशु-बल ने साम्राज्यवाद के दिया अचानक कारा-वास
भड़क उठा इससे जनता का क्षोभ ; क्रांति की ज्वालाओं ने
सभी ओर से किया विदेशी शासन की सत्ता का ग्रास

चंदन के क्षेत्रों के युवकों ने इस बार कर लिया निश्चय—
जिसके कारण श्यामा-मृदुला-सी विभूतियाँ हुईं समाप्त
उस शासन का अंत करेंगे, चाहे देने पड़ें प्राण, अब ;
भारत को स्वतन्त्रता का हम लक्ष्य करेंगे सत्वर प्राप्त

अद्‌भुत साहस, बल से चंदन ने नेतृत्व किया जनता का ;
श्यामा-मृदुला की आत्मा भी चंदन में थी, मानो, लीन
संघर्षों में, कई बार, सिर पर से उसके गईं गोलियाँ,
कई बार सीने के आगे आकर भिड़ी तेज संगीन

चंदन और अन्य तरुणों ने यह व्रत लिया, क्रांति के पहले,
कि हम किसीके प्राण न लेंगे ; पर, देने में अपने प्रा
हिचकेंगे न एक क्षण को भी कभी; अमान्य करेंगे सत्ता
विदेशियों की प्रति-पद, प्रति-क्षण, चाहे हो सब-कुछ बलिदान

मृत्युंजय तूफ़ानी दस्ता यह युवकों का प्रलय बन गया
उस शासन के लिए, सौकड़ों वर्षों तक जिसने था र
भारत की जनता का चूसा, आत्मा पतित बनाई उसकी,
उसे, दासता में रखने को, किया प्रवंचित, भ्रांत, विभक्त

रक्त बहाए बिना शत्रु का, लड़े अनय से भारत-भर के
हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, दलित, द्विजादिक, सब संयुक्त
जनता के संगठन, ऐक्य से, क्रांति-यत्न में योग-दान ने
कई क्षेत्र शासन की सत्ता से, मानो, हो गए विमुक्त

सभा, जुलूस और हड़तालें सबसे बड़ी तीसरे क्रम में
स्वतंत्रता के आंदोलन में हुईं; दमन की सीमा पा
की शासन ने, चला गोलियाँ पग-पग पर, जनता को इतना
उत्तेजित कर दिया कि उसने भी कुछ किए सरोप प्रहार

चंदन ने निज क्षेत्र संगठित किया कुशलता से, उसमें तो
एक बूँद भी कहीं विरोधी शासक-दल का बहा न रक्त
शांत रूप से जनता को हो गई प्राप्त निज शासन-सत्ता ;
हुआ व्यवस्थित भी कुछ उसमें उसका आत्म-प्रबंध सशक्त ।

इससे और अधिक चिंतातुर हुआ विदेशी शासन, उसने
विपुल शक्ति से उस अंचल पर किया क्रूरतम दमन-प्रहार ।
नीति अहिंसक, कार्य क्रांति-मय ; आंदोलन के चरम शिखर पर
हुए गोलियों के शासन की चंदन, रहमतअली शिकार !

९३

अपने इन प्यारे नेताओं के वध से जनता उत्तेजित
इतनी हुई कि उसने अपने अंचल में सत्ता-अवसान,
पूर्ण रूप से, किया विदेशी शासन का ; परंतु, बाहर से
ला सेना अत्यधिक, किया फिर उसने निज अधिकृत वह स्थान।

किया विदेशी शासन ने यह निश्चय, दमन हुआ जब निष्फल,
कि अब छोड़ना होगा उसको भारत। काराओं के द्वार
खुले। मुक्त जब हुए कृष्णापुर-हरिपुर के आंदोलनकारी,
तब शहीद-स्मारक का उनके मन में आया विमल विचार।

निश्चय हुआ—महाविद्यालय बने विश्वविद्यालय, स्मारक
यह हो हरिपुर में उन सबका, जो सबसे प्यारी संतान
सिद्ध हुए भारत-माता की इस अंचल में, किया जिन्होंने
मातृ-भूमि की स्वतंत्रता की बलिवेदी पर निज बलिदान।

ग्राम-विश्वविद्यालय स्थापित हुआ ; केंद्र में उसके श्यामा,
चांदन, मृदुला, रहमत की हो गईं मूर्तियाँ मंचासीन
जिन्हें बनाया सबसे अच्छे मूर्तिकार ने। यह निज कविता
उनके नीचे लिखा गया कवि एक देश का कला-प्रवीण.—

"जलियाँवाला से लेकर जो बियालीस की महाक्रांति तक,
हिंदू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्ध,दलित, द्विज आदिक, धन्य
हुए, प्राण निज दे, मिल-जुलकर, मातृ-भूमि की स्वतंत्रता की
बलिवेदी पर, उनको अर्पित जनता-श्रद्धा-भाव अनन्य

ये आंचलिक प्रतीक एकता के उनकी, श्रम, बलिदानों के,
साथ-साथ कारा-वासों के ; इनके भी स्मृति-संचित नाम
भारत-माँ के चरणों में ये हुए समर्पित इन क्षेत्रों की
जनता के बलि-रूप ; इन्हें भी जनता का सस्नेह प्रणाम !

श्री ज० प्र० मिलिन्द के जीवन पर एक दृष्टि

जन्मस्थान—श्री जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द का जन्म सदर बाज़ार, मुरार (ग्वालियर, मध्यप्रदेश) में हुआ। स्थायी तथा पुराना वासस्थान भी वहीं है।

जन्मतिथि—कार्तिकपूर्णिमा संवत् १९६४ वि० (ता० १९ नवम्बर १९०७ ई०)

वर्तमान वासस्थान तथा कार्यालय का नया पता—दाल बाज़ार, लश्कर (ग्वालियर, मध्यप्रदेश)।

शिक्षा—मुरार हाई स्कूल में प्रारम्भिक, तिलक राष्ट्रीय विद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) मे मैट्रिक तक, तिलक महाराष्ट्र विद्यापीठ, पूना से मैट्रिक्युलेशन परीक्षा, उसके बाद, तीन वर्ष, साहित्य, इतिहास, अर्थशास्त्र और राजनीति-विज्ञान की उच्च शिक्षा काशी-विद्यापीठ, वाराणसी के तत्कालीन राष्ट्रीय महाविद्यालय में। आपको हिन्दी, संस्कृत, अँग्रेजी, उर्दू, मराठी, बँगला और गुजराती भाषाओं का ज्ञान है।

पुस्तकें—आपकी रचनाओं में 'प्रताप-प्रतिज्ञा' (सन् १९२९ ई०), 'समर्पण' (सन् १९५० ई०), 'गौतम नन्द' (सन् १९५२ ई०) तथा 'प्रियदर्शी' (सन् १९६२ ई०) नामक चार नाटक, 'जीवनसंगीत' (सन् १९४० ई०), 'नवयुग के गान' (सन् १९४२ ई०), 'बलिपथ के गीत' (सन् १९५० ई०), 'भूमि की अनुभूति' (सन् १९५२ ई०) तथा 'मुक्तिका' (सन् १९५४ ई०) नामक पाँच कविता-संग्रह, 'स्वतंत्रता की बलिवेदी' (सन् १९६२ ई०) नामक एक खंडकाव्य, 'चिन्तनकरण' (सन् १९४४ ई०) तथा 'सांस्कृतिक प्रश्न' (सन् १९५४ ई०) नामक दो निबन्धसंग्रह और 'बिल्लो का नकछेदन' (सन् १९५४ ई०) नामक एक व्यंग्यविनोदकथासंग्रह ; इस प्रकार तेरह ग्रन्थ अब तक प्रकाशित हो चुके है। 'समता के स्वर' नामक एक नया कवितासंग्रह लिखा जा रहा है।

मध्यभारत-शासन के शिक्षा-विभाग द्वारा नियुक्त साहित्य-मनीषियों की समिति ने आपकी पुस्तक 'बलिपथ के गीत' को १००० रुपयो के

Ms. ...

प्रथम पुरस्कार के योग्य ठहराया था। उत्तरप्रदेश के शासन के शिक्षा-विभाग ने भी, विद्वानों की समिति के निर्णयानुसार, आपके 'बलिपथ के गीत' और 'समर्पण' पर ८०० रुपयों का पुरस्कार दिया था, जो तत्कालीन मध्यभारत के साहित्यकारों को वहाँसे प्राप्त पुरस्कारो में सबसे बड़ा था। आपके 'भूमि की अनुभूति' तथा 'गौतम नन्द' नामक ग्रन्थों पर, मध्यभारत-शासन के शिक्षा-विभाग की कलापरिषद् ने, विद्वानों के परामर्श पर, ७०० रुपयों का प्रथम पुरस्कार दिया था। तीसरी बार फिर उक्त परिषद् ने आपके 'मुक्तिका', 'सांस्कृतिक प्रश्न' तथा 'बिल्लो का नकछेदन' नामक ग्रन्थों पर ५०० रुपयों का प्रथम पुरस्कार दिया था।

कार्य—विश्वभारती, शान्तिनिकेतन (बंगाल) तथा महिला-आश्रम, वर्धा (महाराष्ट्र) में अध्यापक तथा प्रयाग और अजमेर में साहित्य-सेवी तथा राष्ट्रकर्मी के रूप में रहे। पंजाब तथा ग्वालियर की 'भारती' नामक मासिक-पत्रिकाओं तथा ग्वालियर के अर्ध-साप्ताहिक पत्र 'जीवन' के प्रधान-सम्पादक रहे। ग्वालियर स्टेट काँग्रेस के प्रधान-मंत्री तथा मध्यभारत प्रांतीय काँग्रेस की कार्यसमिति के सदस्य रहे। सन् १९४२ के स्वतंत्रता-आन्दोलन में तथा बाद में, सन् १९४८ तथा १९५० में भी, जेलों में रहे। काँग्रेस द्वारा शासन ग्रहण किए जाने पर, सन् ४७ मे, मिनिस्टर-पद स्वीकार करने का अनुरोध किए जाने पर, उसे अस्वीकार कर चुके हैं। सन् ५५ में शासकीय सेवा में लगभग ८०० रुपए मासिक का एक कार्य पाने का अवसर सामने आने पर उसे भी अस्वीकार करके स्वतन्त्र साहित्यकार तथा पत्रकार बने रहना पसन्द कर चुके हैं। मध्य-भारत समाजवादी दल के, सर्व-सम्मति से, दो बार लगातार, प्रांतीय प्रमुख तथा प्रांतीय संसदीय समिति के अध्यक्ष चुने गए थे। मध्यभारत श्रमजीवी पत्रकार-संघ, नव संस्कृति संघ, मध्यभारत हिन्दी साहित्य सम्मेलन, ग्वालियर-संभाग-साहित्यकार-परिषद् तथा साहित्य साधना

संसद् आदि संस्थाओं के अध्यक्ष रह चुके है। शिक्षा-विभाग द्वारा संस्थापित साहित्य तथा कलाओं की संस्था 'मध्यभारत-कला-परिषद्' के सर्वसम्मति से अशासकीय उपाध्यक्ष चुने गए थे। भारत-सरकार के शिक्षा तथा संस्कृति विभाग द्वारा संस्थापित राष्ट्रीय साहित्य-अकादेमी की महासमिति तथा हिन्दी परामर्शदात्री समिति के अशासकीय सदस्य, मध्यप्रदेश हिन्दी साहित्य सम्मेलन, ग्वालियर संभाग श्रमजीवी पत्रकार संघ, साहित्यकार परिषद् तथा मध्यप्रदेश स्वतन्त्रता संग्राम सैनिक संघ की कार्यकारिणी समितियों के सदस्य तथा बृहत्तर ग्वालियर नगर निगम के पार्षद भी रह चुके हैं।

सन् १९५२ से ६० तक अपना अधिकांश समय मुख्यतः स्वाध्याय, ग्रन्थ-लेखन तथा स्वतन्त्र पत्रकार के कार्य में लगाते रहे हैं। देश के अनेक प्रतिष्ठित हिन्दी, अँग्रेजी, गुजराती, बँगला, मराठी आदि भाषाओं के दैनिक पत्रों के प्रतिनिधि हैं या रहे हैं। स्वतन्त्र रहते हुए ही मध्यप्रदेश-शासन के साप्ताहिक पत्र 'मध्यप्रदेश-संदेश' के साहित्यिक विशेष-अंश के अशासकीय संपादन-परामर्शदाता तथा इन्दौर-भोपाल आकाशवाणी की कार्यक्रम-परामर्श-समिति के अशासकीय सदस्य का कार्य भी कर चुके हैं।

अप्रैल १९६१ से पुनः समाजवादी दल के सदस्य के रूप में राजनीति के क्षेत्र में भी कार्य करने लगे हैं।

ता० १९ जुलाई १९६१ को सर्वसम्मति से मध्यप्रदेश प्रान्तीय समाजवादी दल के अध्यक्ष चुने गए।

श्री ज० प्र० मिलिन्द की साहित्य-साधना पर विद्वानों, पत्रों तथा समालोचकों के कुछ अभिमत

श्री जगन्नाथप्रसाद मिलिंद हिन्दी के उच्चकोटि के साहित्यकार एव कलाविद् हैं। उनकी रचना बहुत ही स्फूर्तिदायक रही है।

— (डॉ०) वृन्दावनलाल वर्मा

श्री मिलिंद के व्यक्तित्व और कवित्व का मैं सदा प्रशंसक रहा हूँ। वह कवि, नाटककार, साहित्यकार, सफल पत्रकार एवं आदर्श अध्यापक हैं। सबसे बढ़कर वह सहृदय और श्रेष्ठ मानव हैं।

—(डॉ०) हरिशंकर शर्मा

श्री मिलिंदजी की वेदना और भावना केवल मन को छूती ही नहीं, उसमें एक आन्दोलन भी पैदा करती है। उनमें आज और कल का वह स्वर, वह चिन्तन भी है, जिसमें एक श्रेष्ठ, सुखी और समृद्ध मानव-समाज की आशा है। प्रत्येक रचना में एक संदेश, साधना की एक छाप और मानवीय वेदना की कसक है। इधर ऐसी उद्देश्यपूरक और सार्थक रचनाएँ हिन्दी में कम ही देखने को मिलती हैं।

—'नया समाज', अप्रैल १९५२

मिलिंदजी की अनुभूति जीवन की अनुभूति है। वह भूमि की अनुभूति ही पर अपने को खड़ा करते है। इसलिए, जीवन की साधना को गतिबद्ध करते समय उनकी लेखनी पूर्णतया ईमानदार रह सकी है। उनका दृष्टिकोण स्वस्थ और आधुनिकतम है। उनमें बर्नार्ड शॉ की भाँति सफल, सुन्दर व्यंग्य भी है। उनकी कृतियों में युग का अनोखा चित्रण है, जादूभरा-सा। वह नव-संस्कृति के अधिकारी वाहक हैं। उनके साहित्य में मूक-शोषित मानवता के संगठित असन्तोष की वाणी और शृंखला-खण्डन की वास्तविक प्रेरणा मिलती है। वह शोषितों और दलितों के प्रहरी प्रतिनिधि कलाकार हैं। मानवता के इस नन्दादीप में हिन्दी को सच्चे गुरु जी मिला।

—'जनवाणी', जुलाई तथा सितम्बर, '५१

श्री मिलिंदजी की गणना निस्संदेह आधुनिक हिन्दी-साहित्य के उन प्रतिनिधियों में की जा सकती है, जिन्होंने नए युग की नई चेतना को प्रभावित किया है और जिनकी कृतियाँ देश को नई दिशा की ओर मोड़ने में सफल हुई हैं। उन्होंने अपनी सर्जनात्मक प्रतिभा और विचार-प्रवणता से युग का साथ दिया है। उनकी साधना की प्रखर ज्योति ने

सर्वांगीण जन-जीवन को आलोकित किया है। उनकी अनुभूति मानवता की सच्ची अनुभूति है। उनकी वाणी युगदेवता की वाणी और उनके स्वरों में युग-देवता के स्वरों की झंकार है।

—'जनसत्ता', दिल्ली, ३१ दिसम्बर '५२

मिलिंदजी ने सच्चे जन-कवि की भाँति अपने युग की यथार्थ परिस्थिति को सरल और मार्मिक अभिव्यक्ति के रूप में प्रस्तुत किया है। सर्वत्र उनका दृष्टिकोण मानवतावादी और प्रगतिशील है। उनकी दृष्टि की गहराई और सूझ अनोखी है।

—'साहित्यसंदेश', जुलाई '५१ तथा मार्च '५३

इस युग में भी श्री मिलिन्द अचल, अटल और अभ्रष्ट हैं। ऐसे व्यक्ति कम ही सही, पर, ऐसे लोगों पर देश को सदा गर्व रहेगा।

—मोहनसिंह सेंगर

श्री मिलिन्द का बहुमूल्य जीवन हम लोगों की शक्ति है।

—(डॉ०) माखनलाल चतुर्वेदी

मिलिंदजी की प्रतिभा बहुमुखी है। उन्होंने समस्याओं को राष्ट्रीय दृष्टि-कोण से देखा है और उनपर अपने विचार बड़ी निर्भीकता और सरलता से प्रकट किए हैं। वह बहुत दिनों से साहित्यसेवा करते आ रहे है। उन्होंने गद्य और पद्य दोनों को अलंकृत किया है। वह मध्यप्रदेश की विभूतियों में से एक हैं।

—(डॉ०) गुलाबराय

मिलिन्दजी जो लिखते हैं, बहुत सुन्दर लिखते हैं। उनकी रचनाएँ उत्कृष्ट होती हैं।

—(आचार्य) नरेन्द्रदेव

मिलिन्दजी अभी तरुण बने रह गए। कार्य की शक्ति अभी उनकी बनी है।

—लक्ष्मीनारायण मिश्र

मिलिन्दजी के तपोमय मूक जीवन की साधना को जो मूल्य मिलना चाहिए, वह नहीं मिला। फिर भी, वह दिन दूर नहीं, जब उनका पूर्ण सम्मान होगा।

—उदयशंकर भट्ट

मिलिन्दजी अँधेरी रात में मशाल जलाए जा रहे हैं।

—रामवृक्ष बेनीपुरी

मिलिन्दजी ने सदैव ही स्वस्थ, सुरुचिपूर्ण सत्साहित्य का निर्माण किया है, जिसके कारण हिन्दी-साहित्य का भांडार समृद्ध हुआ है।

—अनन्त गोपाल शेवड़े

मिलिन्दजी के सर्वस्वत्यागी तपस्वी व्यक्तित्व ने क़लम की फ़क़ीरी की है और वह क़लमधारियों के लिए लडा-खपा है।

—वीरेन्द्रकुमार जैन

मिलिन्दजी के नाम से हिन्दी के पाठक अच्छी तरह परिचित होंगे। उनकी रचनाओं में देश की राजनीतिक उथलपुथल, ऐतिहासिक घटनाचक्र तथा नवीन विचारधाराओं के संघर्ष की झाँकी मिलती है। वह अपने प्रयत्न में सफल रहे हैं। उनकी अनुभूति मानवता की अनुभूति तथा युग के प्रतिनिधि कलाकार की ज़ोरदार आवाज़ है।

'आज', जून '५१ तथा २५-१०-५३

देश-प्रेम से आरम्भ होकर मिलिदजी की साधना मानव के प्रेम तक पहुँची है। वह एक सिद्धहस्त कलाकार हैं। उनकी रचनाओं में सरलता है, प्रवाह है, ओज है। उनकी अनुभूति बहुत तीव्र है। इसी कारण उनकी रचनाएँ सच्ची और प्रभावशाली हैं। उनका स्थान साहित्य ही मे नहीं, वरन्, इतिहास में भी निश्चित है, इसमें कोई सन्देह नहीं।

—'विशालभारत', मई '४६

मिलिन्दजी की रचनाओं ने उन्हें पिछले कलाकारों से आगे प्रस्तुत किया है और स्पष्ट किया है कि वह आज भी तरुण हैं। वह आज के युग के साथ भी चल सकते हैं, अपनी उसी प्रतिभा और अमंद गति से वह प्रगतिशील होने के साथ-साथ कलात्मक भी हैं और विचारप्रवण होने के साथ-साथ रससिक्त भी। यही उनकी औरों से विभिन्नता है वह हिन्दी के सफल हैं और उदात्त विचार के कुशल क

भी। जनजीवन से उनका सीधा सम्पर्क है और अपने देश के सांस्कृतिक अभ्युदय के लिए उनकी आत्मा तड़पती है। किसी भी सत्य से उनकी नजर कतराई नहीं। जीवन के सभी स्वस्थ पहलुओं को उन्होंने कृतित्व मे उतारा है। जीवन और सद्‌गुणों के प्रति उन्होंने जो आस्था प्रकट की है, वह पथप्रदर्शन का कार्य करेगी।

—'नई धारा', सितम्बर '५१, अक्टूबर '५१ तथा अप्रैल '५२

मिलिन्दजी आधुनिक हिन्दी कविता के प्रतिनिधि उच्चकोटि के उन साहित्यकारों में से हैं, जिनकी कृतियाँ देश को नई दिशा की ओर मोड़ सकने का तेज रखती हैं। आपने हिन्दी-साहित्य को जो कुछ दिया है, वह प्राण और वास्तविक अनुभूत सत्य से पूरित है। उनकी सभी कृतियाँ अनुपम सौन्दर्य और प्रगतिशील जीवन-दर्शन से पूर्ण हैं। हिन्दी में ऐसी गहन वेदना का स्वर इनेगिने साहित्यकारों की कृतियों में मिलता है। मिलिन्दजी ने कोटि-कोटि श्रमजीवियों की मूक व्यथा को वाणी दी है। हिन्दी-साहित्य के विद्यार्थी और जनता इस साहित्यकार की महत्ता को कभी भुला नहीं सकेंगे।

—'नवयुग', मई '५१

श्री मिलिन्दजी ने शोषित-उत्पीड़ित वर्ग के साथ रहकर उनसे हृदय का सम्बन्ध स्थापित किया है। उनकी रचनाओं में केवल बौद्धिक सहानुभूति के स्वर नहीं, रचनात्मक संघर्ष की प्रेरणा है।

—'रानी', मई '५१

यह निस्संदेह कहा जा सकता है कि मिलिन्दजी ने कविताओं के माध्यम से मानवता के प्रति, विशेषत: दलित और प्रताड़ित जन के प्रति, पाठक-वर्ग का ध्यान आकर्षित करने का सफल प्रयास किया है। मिलिन्दजी ने अपनी काव्य-प्रतिभा को व्योम-विहारिणी न बनने देकर भूमि-चारिणी बनाया है और मानवता के हर्ष-विषाद को सबल अभिव्यक्ति दी है। यह उनकी एक बड़ी सफलता है।

—'आजकल', दिल्ली, नवम्बर '५७

मौलिक अनुभूति मिलिन्दजी की रचना का प्राण है।

—'कल्पना', हैदराबाद, अगस्त '५३

मिलिन्दजी के विचार मौलिक, निर्भीक, सतेज एवं ध्यानाकर्षक हैं।

—बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'

हिन्दी की सेवा तथा साधना ही में अपने यौवन के बड़े भाग को तपस्वी के रूप में मिलिन्दजी ने खपा दिया।

—सत्यदेव विद्यालंकार

मिलिन्दजी विद्रोही साधक और क़लम के धनी कलाकार हैं। उनकी क्रांतिकारी रचनाओं का उद्देश्य बद्धमूल रूढ़ियों की सीमा के बाहर क़दम रखना है। वह सर्वहारा, मानवता और जनतंत्र के कलाकार हैं। उनकी पंक्तियाँ हृत्तन्त्री के तारों को झंकृत कर देती है। नई धारा के उपकरणों में प्राण डालने का मिलिन्दजी ने श्लाघनीय प्रयत्न किया है।

—'अमृतपत्रिका', प्रयाग, ६-९-५३

प्रसिद्ध साहित्यकार

श्री जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द के समस्त ग्रन्थ

कविता-संग्रह

भूमि की अनुभूति	...	४.००
मुक्तिका	...	२.५०
बलिपथ के गीत	...	४.००
जीवन-संगीत	...	३.००
नवयुग के गान	...	३.००

खंडकाव्य

स्वतंत्रता की बलिवेदी	...	२.००

नाटक

गौतम नन्द	...	१.५०
प्रियदर्शी	...	२.५०
समर्पण	...	१.७५
प्रतापप्रतिज्ञा	...	१.२५

निबन्ध-संग्रह

सांस्कृतिक प्रश्न	...	२.५०
चिन्तनकरण	...	२.००

व्यंग्य-विनोद--कथासंग्रह

बिल्लो का नकछेदन	...	२.००

यदि एक-साथ एक ही स्थान से मँगाने हों, या इनमें से कोई भी ग्रन्थ मँगाना हो, तो कृपया लिखिए:—

साहित्य-प्रकाशन-मन्दिर,

हाईकोर्ट रोड, ग्वालियर (म० प्र०)

शुद्धिपत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१६	३	सुस्वर नती	स्वर सुनती
२४	१३	निभर	निर्भर
२७	१४	घमडी	घमंडी
४७	८	चदन	चंदन
४८	६	हें	है
५०	२२	बलआप	बल आप
५१	१५	कृष्णपुर	कृष्णपुर में
५३	१६	कपित	कंपित
५८	२०	बार	वार
६५	१७	शोभ	क्षोभ
७१	१०	तब	तक
८५	२०	निस्वार्थ	निस्स्वार्थ